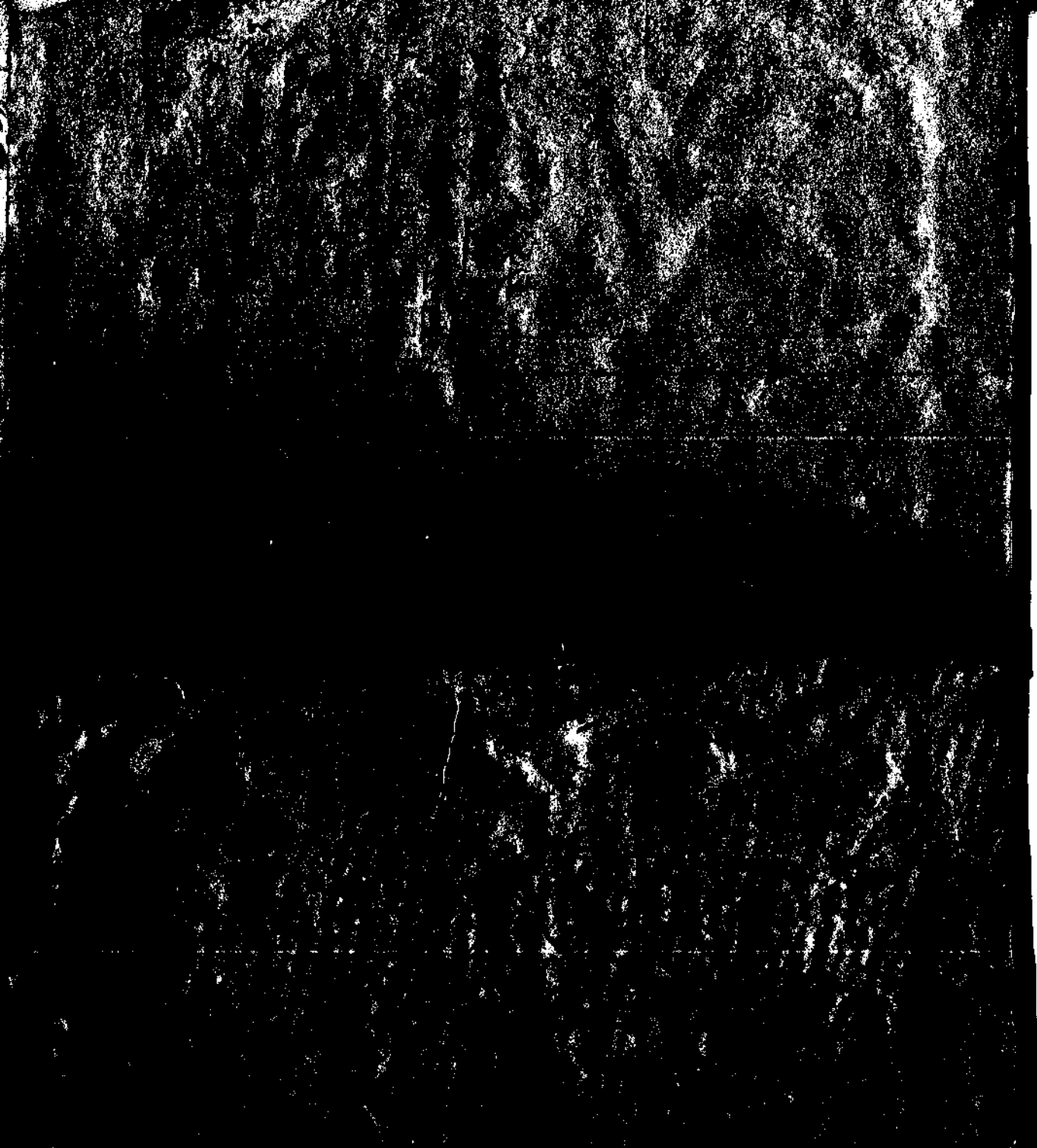

बलराम की तीर्थयात्रा

[संपूर्ण नाटक]

लक्ष्मीनारायण लाल

आरती पब्लिकेशंस
नयी दिल्ली-११००६३

'बलराम की तीर्थयात्रा' नाटक के किसी भी प्रकार के प्रकाशन, अभिनय, प्रदर्शन, प्रसारण, अनुवाद रूपांतर आदि के लिए इसके लेखक लक्ष्मीनारायण लाल की लिखित अनुमति अनिवार्य है।

पता : ५४ ए, एम० आई० जी० फ्लैट
पश्चिम विहार
नयी दिल्ली ११००६३

© लक्ष्मीनारायण लाल

मूल्य : पन्द्रह रुपये
प्रथम संस्करण : १९८३
प्रकाशक : आरती पब्लिकेशंस
५४ ए, एम० आई० जी० फ्लैट
पश्चिम विहार, नयी दिल्ली-११००६३
मुद्रक : रूपाभ प्रिंटर्स, दिल्ली-११००३२
BALRAM KI TIRTH YATRA *(Play) by*
Lakshmi Narain Lal Rs. 15.00

सप्रेम
प्रोफेसर अवधकिशोर शरण को

तात कहउं कछु करउं ढिठाई।
अनुचित छमब जानि लरिकाई॥
अति लघु बात लागि दुख पावा।
काहुं न मोहि कहि प्रथम जनावा॥

लक्ष्मीनारायण लाल नए रंग तीर्थयात्री

श्री लक्ष्मीनारायण लाल उत्तर प्रदेशीय संस्कृति में पैदा हुए; अवधी संस्कारों में पले, बड़े हुए। बाल्यकाल से ग्रामीण होने के नाते कठिनाइयों को केवल स्वीकार ही नहीं, खुशी से झेला भी। विपरीत वातावरण का जमकर मुकाबला किया। सच्चे योद्धा की तरह कभी हार नहीं मानी; पक्के पहलवान की तरह कभी पीठ लगने नहीं दी; अतः कठिनाइयों की अग्नि में तपकर स्वर्ण से चमक उठे। उनके जीवन का लक्ष्य प्रारम्भ से ही एक सुरम्य नाट्योद्यान बनाना रहा है, जिसमें वे सफल हुए। इनकी नाट्य-वाटिका आज सबसे अधिक विकसित, विस्तृत, और सुरभित दिखाई पड़ रही है। विविध प्रकार के देशी-विदेशी फलदार वृक्ष लगाना इनके जीवन का लक्ष्य रहा है। इन्हें उन लोगों से सहानुभूति नहीं होती जो मल-मक्खी की तरह विदेशों से कूड़ा-करकट स्पर्श द्वारा केवल रोग-कीटाणु लाकर भारतवासियों को विकार सिखाने के पक्ष में रहते हैं। ऐसे सस्ते साहित्य से व्यवसाय चलाने वालों के प्रति इन्हें वितृष्णा है। वह मधुमक्खी की तरह विदेशी नाट्योद्यानों से या तो पराग लाते हैं या मधु निर्माण के लिए पुष्प रस। यही कारण है कि इनकी कृतियों में भारतीय संस्कृति और पाश्चात्य आधुनिकता का सुन्दर संगम दिखाई पड़ता है।

लाल की कृतियों पर जितनी आलोचनाएं हुईं, जितने शोध प्रबन्ध तैयार हुए, जितने स्वतंत्र ग्रन्थ लिखे गए, इतने सम्भवतः जयशंकर प्रसाद, लक्ष्मीनारायण मिश्र और जगदीशचन्द्र माथुर के अतिरिक्त और किसी पर निर्मित नहीं हुए। इसका मूल कारण यह है कि इनकी नाट्य-कृतियों में इतना वैविध्य है, प्रयोगों की इतनी बहुलता है, विचारों का इतना विस्तार है, प्रश्नों की इतनी भरमार है कि जो भी इनके नाटक पढ़ता अथवा रंग-

मंच पर देखता है वह विचारों, समस्याओं, प्रश्नों की एक लम्बी कतार साथ लेकर घर लौटता है।

हम जैसे ग्रामीणों का बाल्यजीवन सीमित दायरा और प्राकृतिक परिवेश में व्यतीत हुआ। अतः परस्पर पूरक भाव से जीवन बिताने, औरों का साथ देने और दूसरों के सहायता देने की आशा के साथ सबके सुख-दुःख में सहज भाव से सम्मिलित होने में एक प्रकार के सुख का अनुभव होता है बिना ग्रामीण जीवन बिताये ग्रामवासियों की वकालत करने वाला झूठा वकील नहीं तो क्या है? डॉ० लाल ने प्रयाग में नाट्य संस्था बनायी और विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले बालक-बालिकाओं युवा-युवतियों के साथ नाटक—रंगमंच के प्रति गहरी समझ और समुचित संस्कार पाने के लिए 'नाट्य केन्द्र—स्कूल आफ डेमेट्रिक आर्टस' नामक अपनी संस्था में कितने वर्षों तक कठोर परिश्रम किये। उसी दौरान आपकी महत्त्वपूर्ण नाट्य कृतियों के सृजन हुए, जैसे 'सुन्दर रस', 'दर्पन', 'रातरानी', 'रक्तकमल'। इसी काल खंड में 'नाटक बहुरूपी' और 'नाटक बहुरंगी' के सभी एकांकी नाटकों की लाल ने रचना की। ये सभी छोटे-बड़े नाटक पूरे हिन्दी क्षेत्र में विधिवत खेले जाने लगे। फलतः नाटक और रंगमंच के प्रति एक गहरी रुचि और एक नया रंग-नाट्य आंदोलन मुख्यतः इलाहाबाद, वाराणसी, लखनऊ, कानपुर, पटना, भोपाल आदि क्षेत्रों में विकसित हुआ।

नाटककार लाल की प्रतिभा की सबसे बड़ी पहचान यही है कि इन्होंने अपनी कृतियों में कभी भी अपने आप को दुहराया नहीं। इनकी हर नयी कृति सर्वथा मौलिक, नयी रचना होती है। हर रचना अपने आप को नये रूपबंध और नये रंगमंच प्रयोग के माध्यम से प्रकट होती है।

लाल में साहित्यिकता और रंगमंचीयता का, ग्रामीणता और नागरिकता का, कलात्मक और व्यवसायिकता का, फक्कड़पन और अक्खड़पन का, विनम्रता और हठ-धर्मिता का, भारतीय मनीषा और पाश्चात्य मुमूर्षा का, सनातन निष्ठा और पुरातन अप्रतिष्ठा का विस्मयकारी सम्मिश्रण पाया जाता है। ये निष्ठवान व्यक्ति हैं, जिस कार्य को हाथ में लेते हैं पूरी निष्ठा से निभाते हैं। कक्षा में जितने विनोद से अध्यापन कार्य करते हैं उतने ही गाम्भीर्य से मंच पर अभिनय और निर्देशन भी। अपने सिद्धान्तों के सामने इन्होंने सारे स्वार्थों को ठुकराया; एक से एक सुखद और मानप्रद नौकरी को लात मार दी। इनकी जीवन कहानी स्वतः बड़ी रोचक है अतः इनकी सारी कृतियों को पढ़ने और रंगमंच पर देखने में मनोरंजन से लेकर आत्मरंजन का जो प्रेक्षा आनन्द मिलता है, वह हिन्दी नाट्य जगत् और क्षेत्र में अभूतपूर्व है। हर कृति एक नयी भावभूमि पर आधारित, एक नये रंग प्रयोग के रंगों से सराबोर-निर्देशक, अभिनेता और रंग समीक्षक, प्रेक्षक, रंगशिल्पी, सभी के लिए समान रूप से चुनौती पूर्ण पर उसी स्तर पर अति आकर्षक।

वास्तव में, अपने सम्पूर्ण अर्थों में लाल पूरे रंग-कर्म या रंग-तप से अपनी भारतीय रंगमंच नाट्य परम्परा की वैज्ञानिक खोज, अनुसंधान और रंग प्रतिष्ठा कर रहे हैं।

निश्चय ही इससे समूचा भारतीय नाट्य और मुख्यतः हिन्दी नाट्य और रंगमंच हर तरह से समृद्ध हुआ है।

इनके प्रायः सभी नाटक स्वार्थ और परमार्थ, व्यक्तिगत स्वार्थ और सामाजिक मूल्यों के बीच अबाध संघर्ष और प्रतीति के जीवंत 'रंग' हैं।

अभी हाल में लाल की दो कृतियां देखने को मिलीं—'रंगमंच देखना और जानना'। और दूसरी उनकी नाट्यकृति 'बलराम की तीर्थयात्रा'। जहां उनकी पहली कृति रंगमंच को 'देखने' और 'जानने' की सनातन दृष्टि से इस तरह पहली बार हम से परिचय कराती है, वहां दूसरी ओर शुद्ध रचना और सौन्दर्य बोध के स्तर से 'बलराम की तीर्थयात्रा' नाट्य कृति पुराण से लेकर अति आधुनिकता की सनातनता के गहरे संदर्भों में अपने जीवन के साथ हमारे 'मैं' से मेरे मैं का आत्म-साक्षात्कार कराती है। यज्ञ का जीवन से क्या संदर्भ है? यज्ञवस्तुतः है क्या, इसे सहज ही जिस तरह लाल ने इस कृति में देखा-दिखाया है, मैं वास्तव में मंत्रमुग्ध रह गया। जीवन की यह समझ और यह रंग पकड़।

गहरे अर्थों में 'बलराम की तीर्थयात्रा' लाल की नवीनतम नाट्य रचना है। 'रचना' मैं जानबूझकर इसलिए कह रहा हूं कि मैंने बहुत समीप से लाल की नाट्य-प्रक्रिया को विकसित होते देखा है। यह नाटक लिखते नहीं बल्कि सही अर्थों में रचते हैं। आप अपने नाटक के भीतर छिपे

हुए रंगमंच को सिर्फ जानते ही नहीं बल्कि उसे प्रत्यक्षत: देखते हैं।

पिछले चार-पांच वर्षों के भीतर 'बलराम की तीर्थयात्रा' नाटक की रचना की है। इस नाटक में लाल वास्तव में जैसे अपनी तीर्थ यात्रा पर पूरी आस्था, विश्वास और शक्तिमत्ता के साथ चल पड़े हैं। इससे पूर्व लाल अनेक पौराणिक चरित्र, आख्यान और मिथकों को लेकर अनेक शक्तिशाली नाट्य रचना कर चुके हैं। उन सब नाट्य रचनाओं से इस नाट्य रचना में एक गुणात्मक अंतर है। पहले के नाटकों में पौराणिक पात्रों, इतिवृत्तों को लाल अपनी सुविधा और अपने लक्ष्य के अनुसार तनिक झुका-फिरा लेते थे, लेकिन पहली बार इस नाटक में पुराण की उस कथा और बलराम के उस चरित्र और उनके जीवन से संबंधित घटना को बिल्कुल उसी तरह से लिया है जैसा कि पुराण में है और उसी को आधार बनाकर लाल ने यह अत्याधुनिक नाट्य रचना की है जिसे पढ़कर मैं बहुत ही प्रभावित हुआ। इस नाट्य लेखन के दौरान उनसे जब भी मेरी बातें हुई हैं उन्होंने मुझसे एक ही बात कही थी कि हमारी पौराणिक कथाएं और चरित्र जितने प्राचीन हैं उतने ही आधुनिक और समसामयिक हैं। उनमें 'देश' और 'काल' जैसे सनातन हैं।

इसी सनातनता के आधार पर 'बलराम' के जिस चरित्र की सृष्टि हुई है वह 'क्लासिकल' और आधुनिक नायकों के समस्त प्रतिमानों और तत्त्वों को अपने आप में प्रतिष्ठित करने वाला है।

भारतीय मनीषा में कर्म और योग के ऊपर बहुत विचार हुआ है। मनुष्य ही क्या कर्ता है? मनुष्य ही क्या भोक्ता है? इस कर्तृत्व और भुक्तित्व में प्रकृति का कितना हाथ है और कितना हाथ अहंकार का है। इस पर उपनिषद् से लेकर गीता तक खूब विचार किया गया है। पर आज अपने वर्तमान समय में जिस तरह से पश्चिम का प्रभाव भारत पर पड़ा है और पड़ रहा है उसमें भारतीय चित्त कर्ता और भोक्ता इन दोनों प्रश्नों को लेकर पूरी तरह से विचलित हैं। आज भोग की और उपभोग की जो भयंकर आंधी भारत तथा पूरे विश्व में बह रही है और उससे भोग की जो बाढ़ इस छोर से उस छोर तक उमड़ रही है उससे पार पाना आज सबसे बड़ी चिन्ता और चुनौती है।

हमारे यहां तीर्थ यात्रा कर्म, योग और यज्ञ जिन गहन संदर्भों में कल्पित और व्याख्यापित हैं, लाल ने उसी कर्ता और भोक्ता के दुर्दम संघर्ष के भीतर से उसे नाट्य रूप दिया है। 'बलराम की तीर्थयात्रा' की जो भूमिका है या जो पृष्ठभूमि है, वह कितना सनातन और समसामयिक है। मनुष्य किस तरह अपनों से दु:खी, त्रस्त होकर, आत्मयात्रा के लिए या आत्म-साक्षात्कार के लिए अपने परिवेश से बाहर निकलता है और जिस तरह से वह आत्म साक्षात्कार के लिए संघर्ष रत होता है, वह क्या उसके लिए तीर्थ-यात्रा नहीं है? वह अपने 'मैं' के साथ अपने अंत:करण या आत्म से पलायन कर क्या कभी-कभी आत्मानुभूति के तीर्थ तक नहीं पहुंचता? भोग की परम तृप्ति के लिए वह नास्तिक होकर जो पाना चाहता है क्या कुछ पा सकता है? वास्तव में यह बहुत बड़ी यात्रा है सनातन बलराम की पुराण से लेकर आज तक की। जिसका 'बल' राम नहीं है बल्कि उसका 'मैं' है, क्या इस बल के सहारे वह उस बियाबान रेगिस्तान में नहीं जा पहुंचता जहां बांसुरी गायब हो जाती है, बांसुरी मिलती भी है तो उसके छिद्रों में बालू कण भरे होते हैं और तब उस भयंकर सन्नाटापूर्ण क्षण में उस निर्जन पथ पर किसके पैरों की छाप सहसा दिखाई पड़ जाती है?

लाल ने इस नाटक में जो तीर्थयात्रा की है वह वास्तव में समूचे भारतीय नाट्य जगत् की एक अभूतपूर्व तीर्थयात्रा है। इस नाटक का जो रंगमंचीय स्वरूप है, वह एक ओर जितना शास्त्रीय है दूसरी ओर वह उतना ही अत्याधुनिक है। इसमें संगीत, नृत्य और अभिनय इन तीनों का जो अद्भुत समन्वय हुआ है वह लाल की पूरे नाट्य जगत् को एक महत्त्वपूर्ण देन है। यह नाट्य कृति अभिनेता, निर्देशक, रंग शिल्पी और साथ ही प्रेक्षक समाज के लिए तीर्थयात्रा के समान है। इसमें शास्त्रीय और समसामयिक रंगमंच के जिसने भी रंग संभव हैं, वे सब उभरकर आए हैं। और लाल की जो 'बहुरूपीय' और 'बहुरंगीय' यात्रा न जाने कब से शुरू हुई थी, उस सब को एक रचनात्मक सार्थकता सहज ही प्राप्त हुई है, इसके लिए हम सब नाटककार, रंगकर्मी लाल को हार्दिक बधाई देते हैं।

गुरुपूर्णिमा २०४० वि०

—दशरथ ओझा

पात्र

बलराम
करणम
रेवती
गोपी
इंदूर
मोहिनी
कुंजल
कपी
आजीव
पंचम
राजा रैवत
रानी
परिचारक—सांडव
परिचारिका—आनापान
अंगरक्षक और लोग

प्रथम अंक

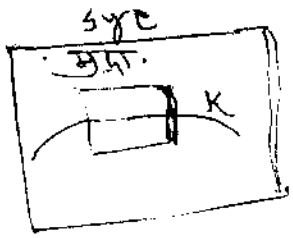

पहला दृश्य

[पृष्ठभूमि से संगीत उभरना। लोगों का गाते हुए मंच पर आना।]

जय जय जय शंकर त्रिपुरारि
जय अध पुरुष जयति अध नारि
जय जय जय शंकर त्रिपुरारि ॥
आध धवल तन आधा गोरा
आध सहज कुच आध कटोरा ॥
आध जोग अध भोग विलासा
आध पिधान आध नगबासा ॥

[गाते हुए लोगों के सामने बलराम, रेवती का आना। पीछे बहंगी लिये पंचम। सब से पीछे करणम।]

अध चेतन मति आधा भोरा
आध पटोर आध मुंजडोरा ॥
आध चान अध सिधुंर सोभा
आध विरुप आध जग लोभा ॥

करणम : बलराम, अपनी पत्नी रेवती के साथ, कहां जा रहे हैं ?

एक पुरुष : पहले यह बताओ, क्यों जा रहे हैं ?

करणम : पहले 'क्यों', फिर 'कहां'। कौरव-पांडव को बहुत मनाया-धमकाया, गुस्सा किया कि महाभारत की लड़ाई मत लड़ो। पर जो है सो है। कौन किसे मानता है। कौरव-पांडव दोनों से नाराज होकर तीर्थयात्रा के बहाने जा रहे हैं।

दूसरा पुरुष : तीर्थयात्रा, तीर्थयात्रा का बहाना ?

करणम : भाई लोग, मुझे जाने दो। क्यों और कहां का उत्तर बताने में नहीं, खुद देखकर पाने में है।

[तेजी से जाना, लोगों का फिर वही गाना। बलराम रेवती और पंचम के पीछे करणम का आना।]

करणम : जमुना गंगा के तीर्थों का भ्रमण कर अब नैमिषारण्य तीर्थ की ओर···।

[बलराम के साथ जाना। लोगों का वहीं बैठना। ऊंचे आसन पर रोमहर्षण के बैठने और कथा कहने का दृश्य।]

रोमहर्षण : लोगों के मन में यह उलझन है कि आज संसार में इतना लड़ाई-झगड़ा, इतना दोष, दुःख और वैमनस्य क्यों है ? जो सृष्टि का मूलकारण परमात्मा है, उसको लोग भूल गये हैं। जब वही भूल जाएं तो धर्म के टिकने का कोई भी स्थान अपने हृदय में नहीं रहता। धर्म किस की शरण में ?

[बलराम का आना।]

रोमहर्षण : आज धर्म किस की शरण में है ? धर्म के प्रेरक, धर्म के रक्षक धर्म के परमफल स्वयं भगवान हैं।

करणम : (रोमहर्षण से) अरे सुनो। सामने देखो। महाराज बलराम और रेवती, उठकर प्रणाम करो।

रोमहर्षण : धर्म इसलिए कि जीवन में पराधीनता न हो। विषयों की पराधीनता, इन्द्रियों की, मन की, अहंकार की, भ्रम की, अज्ञान की पराधीनता।

बलराम : भाग यहां से। सूत जाति में पैदा हुआ वाह्मनों से ऊंचे आसन पर बैठा है।

रोमहर्षण : विराजो महाराज। कथा में विघ्न मत बनो।

करणम : अरे उठकर प्रणाम करो। स्वागत सत्कार करो।

रोमहर्षण : व्यास पीठ पर हूं।

बलराम : सूतपुत्र व्यास पीठ पर ?

रोमहर्षण : सूत, जो कथा सूत्र को जोड़े।

बलराम : व्यासपीठ से उठता है या नहीं ?

रोमहर्षण : कथा पूरी होने दें।

बलराम : जानता नहीं मैं कौन हूं ?

रोमहर्षण : कृष्ण के बड़े भाई, बलराम। पर कृष्ण कौन है, यह कथा पूरी होने दें।

बलराम : तुझे कथा कहने का कोई अधिकार नहीं।

रोमहर्षण : कथा पर सब का अधिकार है।

बलराम : मुझे ज्ञान देगा ?

रोमहर्षण : कथा ज्ञान है।

बलराम : भागता है या नहीं।

करणम : महाराज, इसे क्षमा कर आगे बढ़ें। (इधर) जिद्दी कहीं का, उठकर प्रणाम कर ले, किस्सा खत्म।

रोमहर्षण : यह किस्सा कहानी नहीं, कथा है—भागवत कथा।

[बलराम का रोमहर्षण पर प्रहार करना।]

रोमहर्षण : सुनो, सुनो कथा, संसार में लोग अपने शत्रु पर विजय करते हैं। लेकिन परीक्षित ने कलियुग पर विजय प्राप्त की। कलियुग माने काल। जब परीक्षित कलियुग पर विजय प्राप्त करके दिग्विजय के लिए गये, तब जहां, जहां जाय, वहां वहां श्रीकृष्ण महिमा सुनने को मिले। लोग कहें, यह वही परीक्षित है, जिनकी रक्षा श्रीकृष्ण ने गर्भ में की थी। ओहो! परीक्षित के पिता साक्षात भगवान श्रीकृष्ण की बहन सुभद्रा के पुत्र थे।

[बलराम द्वारा रोमहर्षण की हत्या। लोगों का हाहाकार।]

एक पुरुष : यह जघन्य अपराध है।

दूसरा पुरुष : इस हत्या के लिए प्रायश्चित करना चाहिए।

बलराम : अपराधी को दंड देना मेरा कर्तव्य है। घमंडी सूतपुत्र व्यासपीठ पर?

एक पुरुष : महाभारत की लड़ाई में श्रीकृष्ण को अकेला छोड़कर तीर्थयात्रा के बहाने भागना कर्तव्य था?

दूसरा पुरुष : अपने प्रति एक कर्तव्य दूसरे के प्रति दूसरा कर्तव्य?

बलराम : सूत परम्परा को बदल कर भागवत परम्परा।

करणम : परम्परा होती है महाराज, परम्परा बदली या बनायी नहीं जाती।

बलराम : परम्परा मैं बनाऊंगा।

दूसरा पुरुष : जो परम से भी परे है उसका कोई और कर्त्ता नहीं हो सकता।

करणम : हां, महाराज।

बलराम : मैं…।

एक पुरुष : किस की शरण में जाना चाहते हैं?

बलराम : मैं स्वयं अपनी शरण में हूं।

एक पुरुष : इतना अहंकार?

दूसरा पुरुष : इतना भ्रम।

[मौन। बलराम का चलना।]

करणम : महाराज। उधर कहां जा रहे हैं?

बलराम : रैवतक में विहार करने। स्वर्ण द्वीप नाम है उस स्थान का। मणि महल में विहार।

[रेवती के साथ चल पड़ना।]

करणम : महाराज मैं? करणम?

बलराम : अब हम पैदल नहीं, रथ पर जायेंगे।

करणम : रथ के पीछे दौड़ता हुआ मैं…।

बलराम : नहीं, कोई जरूरत नहीं।

[जाना। लोगों का गायन।]

आध जोग आध भोग विलासा
आध पिधान आध नगवासा॥
आध चेतन मति आधा भोरा।
आध पटोर आध भुंज डोरा॥

दूसरा दृश्य

[समय : दोपहर। स्वागत संगीत। बलराम और रेवती का आना। उनसे थोड़ी दूर पंचम और करणम का दिखना।]

रेवती : यहां से रैवतक उद्यान शुरू होता है। हमारी अगुआनी में यह संगीत !

बलराम : कहां से कहां पहुंच गये। रास्ते में हिमनदी मिली थी—विपाट नाम था। उसमें एक समूचा पेड़ बह रहा था।

रेवती : चारों ओर कितनी शोभा, कितनी सुगंधि। उधर नहीं, इधर देखिए—यही स्थान स्वर्णद्वीप है।

बलराम : मुझे क्या हो गया ?

रेवती : सोचिये नहीं, देखिए।

बलराम : क्या ?

रेवती : आइए मेरे साथ। हमारी अगुआनी में कितना प्रबन्ध है। मां और पिताश्री स्वयं आये हैं। वह देखिए। पीछे मुड़कर क्या देख रहे हैं ? आगे आइए।

बलराम : सूतपुत्र रोमहर्षण की हत्या कैसे हो गयी ? हम तीर्थयात्रा में थे, यह क्या हो गया ? तीर्थयात्रा नहीं थी। यात्रा का बहाना था। बहाना··· बहाना। बाध्यता क्रिया थी—यात्रा का प्रारम्भ। हत्या प्रतिक्रिया थी—उसी की।

रेवती : हम यहां विहार करने आये हैं।

बलराम : भूलने आये हैं।

रेवती : ऐसा क्यों सोचते हैं ?

बलराम : भागकर आये हैं।

[करणम की पंचम के साथ विनोद पूर्ण हंसी।]

करणम : निवास नहीं विहार। विशेष प्रकार की हार··· वि···हार।

बलराम : ऐ ! क्या नाम है तेरा ?

करणम : करणम। रास्ते में कितनी बार नाम पूछा है।

बलराम : अब तुम यहां से जाओ। यहां अब तुम्हारी कोई जरूरत नहीं।

करणम : मुझसे ऐसा क्या अपराध हुआ महाराज ? इतनी लंबीयात्रा, आपके रथ के पीछे-पीछे दौड़ता रहा। जहां प्यास लगी, जल पिलाया। देखिए यह जल पात्र, विश्राम चाहा, पैर दबाये। जहां मनोरंजन की इच्छा हुई, कैसे कैसे विनोद किये। जहां क्रोध आया, कैसे सहा। आपका तनाव, दबाव चिढ़ आसक्ति-विरक्ति···

बलराम : चला जा। जाता है या नहीं ?

पंचम : अब जा यहां से। महाराज को नहीं जानता ?

करणम : बस, तेरा यही भ्रम बना रहे। अरे भाई, तू मुझे

ऐसे क्यों देखता है ? इधर देख इधर।

पंचम : मैं तेरी बातों में आने वाला नहीं।

करणम : इधर आ इधर।

पंचम : भाग जा भाग।

करणम : अब कहां भागूं ?

पंचम : किसने कहा, हमारे साथ आओ।

करणम : यह कहा नहीं जाता। ऐसा होता है।

पंचम : महाराज ने कितनी बार कहा कि वापस जाओ। साथ चलने की कोई जरूरत नहीं, पर जैसे कुछ सुनते ही नहीं।

करणम : भाई, चिल्लाओ नहीं। मैं छोटा, दुबला-पतला, जरूर हूं, इसमें कोई शक नहीं, पर ऐसा मत समझो, तुम्हारी आवाज से उड़ जाऊंगा। महाराज के साथ हूं, तेरे नहीं। नमस्ते।

बलराम : अच्छा, अब यहां से विदा लो।

रेवती : यह लो विदाई।

करणम : मैं सब कुछ लेता हूं, महाराज, मगर विदाई नहीं लेता। यही स्वभाव है। क्या करूं ?

बलराम : जाता है या नहीं ?

करणम : अगर यही अच्छा है आपकी तो जाना ही है।

[जाना]

रेवती : जो भी हो, करणम बहुत सीधा सादा था।

[चलते हुए]

बलराम : आश्चर्यजनक था, पता नहीं कैसे, मेरे भाव, मेरी इच्छायें झट जान लेता था।

[अगुआनी संगीत]

बलराम : इतने लोग ?

रेवती : हमारे स्वागत के लिए।

बलराम : वे कौन हैं ?

रेवती : मेरे पिता श्री।···मां···।

[परिचारिकाओं—(स्त्री-पुरुष) सहित राजा रेवत-रानी का आना। अगुवानी और स्वागत।]

बलराम : यह कैसी रहस्यमय घाटी है ?

राजा : आर्यश्रेष्ठ, यह कोई साधारण घाटी नहीं, स्वर्णद्वीप है।

[रेवती का अपने पिता से गुप्त वार्ता।]

राजा : आप यहां सानन्द रहेंगे।

रानी : आपका सुख हमारा सौभाग्य।

राजा : यात्रा के सारे कष्ट भूल जाएंगे।

बलराम : सच ?

राजा : आइए।

[रेवती का मां के साथ गुप्त वार्ता।]

राजा : क्या सोच रहे हैं ?

बलराम : हम रथ में सवार जैसे जैसे इस घाटी में प्रवेश कर रहे थे, हवा में जैसे कुछ तेज और ऊँचा बजता जा रहा था। कोई वस्तु दिखायी दे रही थी, पर दिख नहीं रही थी। केवल सुनायी दे रही थी।

राजा : वह एक हिमनदी है। उसका नाम विपाट है।

रेवती : विपाट। बचपन में उसके तट पर खेली हूं। खूब खेली हूं। उसकी धार में कोई प्रवेश नहीं कर सकता···सिर्फ देख सकता है।

बलराम : तभी उसका नाम विपाट है—विशेष पाट

वाली। (सुनना) पाश काटने वाली ?

रानी : यह सौभाग्य है···हमारे जामाता यहां रह कर निश्चय ही किसी महाकाव्य की रचना करेंगे।

[हंसी]

रेवती : चलो मां, मणिमहल का सारा प्रबंध देख आएं।

रानी : वहां सारा प्रबंध संपूर्ण है।

राजा : बेटी, यह अपने साथ इतना सारा सामान लेकर क्यों आयी ?

रेवती : रास्ते भर जगह-जगह आपका सुन्दरतम प्रबंध था, पर यह कब कहां, क्या मांग बैठें, कोई पता नहीं इनका।

[बलराम अकेले, पात्र में कोई पेय लिए।]

राजा : ओ हो।

रेवती : तब से इनका मन ठीक नहीं।

राजा : मन को मनोरंजन चाहिए। ऐ चलो इधर। शुरू करो। शाबाश।

[तेज संगीत पर नाचते हुए इंदूर, मोहिनी, कुंजल, कपी और आजीव का आना। नृत्य-संगीत में जैसे सब कुछ डूबने लगा है। बलराम भाव विभोर।]

बलराम : वाह। वाह।

[संगीत]

भिम भिम मैं मैं।
मैं मैं मैं मैं।।
चू चू चू चू।
च चा च चा।।
भिम भिम भिम भिम।

मैं मैं मैं मैं।।
मैं मैं मैं।

[नाचते हुए जाना।]

बलराम : वाह वाह। मैं आनन्द विहार करूंगा।

[रेवती के साथ, पंचम, रानी और परिचारकों का जाना।]

राजा : कितने दिनों को आज मेरी इच्छा पूरी हुई। आप यहां आकर विहार करें। आर्य, आप बहुत थके लग रहे हैं। रास्ते में जरूर कष्ट हुआ है। चलिए, विश्राम कीजिए। निःसंकोच जो भी इच्छा हो आज्ञा दीजिए। कोई किसी तरह का कष्ट हो···

[मौन]

राजा : क्या बात है ? आपके इस मौन से मुझे चिन्ता हो रही है।

[मौन]

बलराम : जिस रथ द्वारा वहां से यहां आया हूं, रथ जितना ही आरामदेह था, रास्ता उतना ही कठिन होता गया···। सुनसान रास्ते में अकेले पैदल चलना कैसा विचित्र संवेदन है।

राजा : आप प्रारंभ से यहां तक रथ पर चढ़कर आये हैं।

बलराम : (स्वगत) हां, मैं रथ पर चढ़कर आया हूं···प्रारंभ से यहां तक रथ पर चढ़कर आया हूं। पर इस यात्रा में रथ में नहीं, रथ पर था। और मैं रथ के पीछे बिल्कुल अकेला पैदल भाग रहा था। जहां से भागा हूं, जैसे वही मेरा पीछा कर रहा है।

यह कष्ट वे नहीं जानेंगे जो अतिवाहन के आदी, गति के अभ्यासी हैं।

[राजा के संकेत पर एक स्त्री, एक पुरुष पारिचारक का आना। राजा का अपने हाथों से बलराम को कोई पेय पिलाना। राजा स्वयं अंगोछे से बलराम के पसीने को पोंछने जा रहे थे। बलराम का मना करना। चुपचाप चल पड़ना।]

परिचारिका : महाराज उधर नहीं। इधर।

परिचारक : इस ओर।

[राजा का ले जाने का संकेत कर स्वयं आगे बढ़ जाना।]

परिचारक : वह सामने है मणिमहल।

बलराम : यह रास्ता कहां जाता है ?

परिचारिका : उधर कोई नहीं जाता महाराज। बड़ा खतरनाक अंधेरा है, जो उधर गया लौटकर नहीं आया।

बलराम : जब कोई उधर गया ही नहीं तो किसे क्या पता ?

परिचारिका : महाराज, इसकी बातों पर ध्यान न दें, बक-बकाना इसकी आदत है। आइये, मेरे साथ चलें।

[बलराम परिचारिका मुख निहार कर चल पड़ते हैं। परिचारक ठगा-सा खड़ा रह जाता है। छिपा हुआ करणम आता है। करणम को इस हालत में अचानक देखकर परिचारक का डर के मारे चीख पड़ना, भागना। उसके हाथ पर रखे पात्र में से वस्त्र, फल-फूल आदि सामग्री

का बिखर जाना। करणम का चुप शांत रहने का संकेत।]

परिचारक : अरे तू है कौन ?

करणम : बता सकता है कि तू कौन है ? फिर यह बेफजूल का सवाल क्यों करता है ?

परिचारक : बेफजूल नहीं, फजूल।

करणम : हां हां, मान गया भाई मान गया। तू राजा का नौकर है भाई नौकर है। चाकर है।

[इस बीच करणम एक फल ले लेता है। परिचारक का छीनना।]

परिचारक : खबरदार। मैं सिर्फ परिचारक नहीं, परिचालक हूं। एक एक फल गिना हुआ है। एक की कमी कौन पूरी करेगा ?

करणम : ठीक कहता है।

परिचारक : अरे खाने लगा ? तू है कौन ? देखूं तेरा पैर। हां, भूतप्रेत तो नहीं लग रहा है। इस घाटी में बहुत भूतप्रेत हैं।

करणम : अरे तो भूतनी और प्रेतनी भी तो होगी। परिचारिका कैसी थी, गदूर अनार सी, चिक्कण नमक सी, जिसका मुंह निहारते ही महाराजा चले गए (हाथ मारना) इधर से उधर और तुम देखते रह गए उल्लू के पट्ठे की तरह।

[फिर हाथ मारकर हंसना। परिचारक का गुस्सा होना।]

परिचारक : बोल। हाथ क्यों मारा ? तोड़कर रख दूंगा। उल्लू का पट्ठा। मुझे उल्लू का पट्ठा कहता है ?

करणम : बैठ-बैठ। हम दोनों भाई भाई हैं।

परिचारक : चुप्प। तेरा नाम क्या है ?

करणम : यह हुई न बात। बेफजूल का सवाल कर रहा था—तू कौन है ? तू कौन है ? बस, इतना ही बता सकता हूं, मेरा नाम करणम है।

परिचारक : करणम ? करणम भी कोई नाम है ? जरूर कोई घोंटा हुआ है।

करणम : जो भी है यही मेरा परिचय है। जैसा देख रहे हो – दुबला पतला यही पहचान है।

परिचारक : बदमास, लुच्चा। मुझे बातों में फंसाकर। वहां मेरी खोज पुकार हो रही होगी।

करणम : घबड़ा नहीं, आजा। आजा। यह जो करणम है न, यह जो है करणम, जिसे तुम प्रत्यक्ष देख रहे हो, यह करणम महाराजा बलराम का संगी साथी है। महाराज के साथ ही यहां आया है।

परिचारक : देख, देख मुझे बहुत देरी हो रही है।

करणम : तो जा न, रोक कौन रहा है।

परिचारक : महाराजा का साथी संगी ? साथ आया है ? मेरे सिर पर हाथ रखकर कह।

करणम : एक फल।

[देना]

करणम : ध्यान से सुनो, हां। महाराजा बलराम जी चाहते थे कि कौरव-पांडव के बीच महाभारत की लड़ाई न हो। वह दोनों को चाहते हैं—यही इनकी दिक्कत है। इसलिए जब इन्होंने देखा—कि दोनों, दोनों···दो···दोनों···।

परिचारक : क्या दोनों, दो दो कर रहा है ?

करणम : यही तो पकड़ने समझने और देखने की बात है।

देखो न, जब कोई दो परस्पर विरोधियों को समान रूप से चाहे तो क्या होगा ? क्रिया होगी, कर्म नहीं, क्रिया। जब क्रिया होगी तो प्रतिक्रिया होगी। मारधाड़ होगी और पश्चाताप भी होगा। मारना भी, भागना भी।

परिचारक : बात को घुमा नहीं। सीधे, जल्दी कह जल्दी।

करणम : जब देखा कि दोनों में लड़ाई छिड़ गयी तो तीर्थयात्रा के बहाने भागे। करणम भी इनके पीछे पीछे। यमुना सूरज गंगा के तीर्थों की यात्रा करते हुए नैमिषारण्य क्षेत्र पहुंचे तो वहां देखा कि रोमहर्षण जो सूत जाति में पैदा होकर भी ब्राह्मणों से ऊंचे आसन पर बैठे हैं ? महाराज जी को उठकर न स्वागत करते हैं, न प्रणाम। इस पर आ गया इन्हें क्रोध। प्रहार कर दिया। सूतजी का काम तमाम। हां, सावधान रहना बच्चू। ऋषि मुनि हाहाकार करने लगे। कहा कि इस हत्या के लिए प्रायश्चित करना चाहिए। इन्होंने कहा—चलो हटो, ऐसी हत्याएं मैंने बहुत की है। तीर्थों में जहां इतनी गंदगी है···। पर इनका मन भड़क गया। एक जाने लगा उधर। दूसरा जाने लगा इधर। क्या किया जाय ? एक ओर राग। दूसरी ओर विराग। एक ओर कौरव, दूसरी ओर पांडव। एक ओर काम—बिना लगाम। दूसरी ओर आग, भाग भाग भाग। एक ओर मीठा मीठा गप्प, दूसरी ओर कड़ुआ कड़ुआ थू। अब तो विश्वास हो गया—करणम महाराजा का संगी-साथी है।

परिचारक : हां, हां। मेरा कहा सुना माफ करना। मेरी सदा रक्षा करना।

[साष्टांग प्रणाम कर भागता है। करणम रोकता है।]

करणम : मेरी रक्षा करना। उन्हें खबर नहीं होनी चाहिए कि करणम यहां है। उनकी तरफ से करणम यहां नहीं है। सावधान। थोड़ा कहन बहुत समझना।

[परिचारक का जाना। परिचारिक पुकारती—ढूंढ़ती हुई आती है।]

परिचारिका : सांडव। सांडव।

[करणम का दौड़कर छिपने का प्रयत्न।

परिचारिका : कौन ? कौन हो तुम ? उसे देख क्या रहा है टुकु टुकुर ? बहरा भी है, गूंगा भी। (ढूंढ़ना) प नहीं कहां चला गया। सांडव·· सांडव।

करणम : (स्वगत) टकटकी लगाकर देखना भी कैस मजेदार भोग है—न कुछ करना न धरना टकटकी···।

परिचारिका : ऐ। भाग जा यहां से। महाराजा का आदेश यहां और कोई नहीं रह सकता। यह वर्जि एकांत है। अरे भाग जा, नहीं तो मार दि जायगा।

करणम : अब यहां से और कहां भागूंगा ? भागना···भ ना। भागा। अभागा। टकटकी···।

परिचारिका : पागल है क्या ?

करणम : हे भला। तुम्हार नाम का है ?

परिचारिका : आनापान।···अउर तोहार ?

करणम : करणम।

करणम : हैय। सुनो हाथ जोड़ता हूं किसी से करणम नाम न लेना, मेरा नाम भक्क है···।

[परिचारिका भक्क करके चली जाती है।]

करणम : हाय। गजब रे गजब। इहां कीमे हरारू···नहीं नहीं मेहरारू नहीं, सुंदरियां, कैसी बाकी नजर से देखती हैं। चुहल करती हैं। खुद छेड़ती हैं। (चारों ओर देखना) चारों ओर राग रंग का ही सिलसिला है।

ऊपर से भक्क। मेरा नाम भक्क है। टकटकी रे टकटकी।

तीसरा दृश्य

समय : आधी रात ।

[रेवती के साथ परिचारिका और एक अंगरक्षक सैनिक । दोनों के हाथ में प्रकाश ।]

रेवती : कहां अदृश्य हो गये ? यहां तक आते हुए देखा ।

[ढूंढ़ना]

रक्षक : यहीं कहीं होंगे । आप महल में जायं । मैं ढूंढकर उनकी रक्षा में··· ।

रेवती : अभी आधी रात भी नहीं बीती है । जब से यहां आये हैं, इस तरह कितने दिन रात हो गये । जाओ ढूंढो ।

[अंगरक्षक का जाना ।]

परिचारिका : आर्य को अंधेरा अच्छा लगता है । कहीं बैठे होंगे चुपचाप ।

रेवती : इस पुष्प का क्या नाम है ?

परिचारिका : पुष्प नहीं पत्तियां हैं महारानी ।

रेवती : उन्हें अचानक कोई सुगंध आती है । चाहे कोई समय हो, चाहे कोई स्थिति हो, यह तत्काल उसी को ढूंढने निकल पड़ते हैं···यह सुगंध कहां

से आ रही है ? क्या है वह ? महल में अगरू, धूप अंगराग, चन्दनद्वीप···सबसे चिढ़ हो गयी है । तुझे कहीं से कोई सुगंध आ रही है ?

परिचारिका : सब फूलों-लताओं की आ रही है । हिमवनों की भी एक गंध है ।

रेवती : गंध है । पर यह गंध को ढूंढते हैं ।

[अंगरक्षक का आना ।]

रक्षक : महाराज यहीं पास में ही हैं । उनकी आज्ञा है··· कोई विघ्न न डाले । वह स्वयं थोड़ी देर से महल लौट आयेंगे ।

रेवती : अंधेरे में बैठे हैं ?

रक्षक : प्रकाश रखने लगा तो नाराज होने लगे ।

परिचारिका : चलिए यहां कोई किसी तरह का डर नहीं ।

रेवती : मेरा यहां बचपन बीता है । इस स्थान को जिया है । यहीं जाना है, जीवन जीने का अर्थ है— समय से संबंधित होना [चारों ओर जो कुछ भी है उससे सम्बद्ध होना । चलो । अभी थोड़ी ही देर में उन दो शिखरों के बीच से चंद्रमा उदित होगा । मैं एक संगीत छेड़ूंगी । वह दौड़े आयेंगे ।]

[सब का जाना । अंधेरा । धीरे धीरे चन्द्रमा के प्रकाश में बलराम का दिखना ।]

बलराम : यह कैसा स्थान है । हर समय बसंत ऋतु । यहां मेरी सुसराल है । इस नाते मेरा यहां इतना सम्मान और गौरव का नाटक है । इसमें मेरी भूमिका क्या है ? खेलता हूं, खेलना नहीं चाहता । देखता हूं पर देखते ही सोचने लगता हूं । भूलना चाहता हूं । (मौन) एक और विपाट नदी की आवाज,

दूसरी ओर यह संगीत। (देखना) वह अंधकार नहीं, भैंसों का झुंड है। (सहसा) प्रकाश में गाय और बैल। इन्हें कौन चराता है? बैल के दो पांव टूटे हैं। गाय और बैल आपस में बातें कर रहे हैं। गउएं उदास हैं। बैल में नियंत्रण का जो सामर्थ्य है···। इन्द्रिय वाणी, मन में अगर नियंत्रण नहीं, तो यह गंध कहां कहां भटकायेगी? नहीं, मुझे यह नहीं चाहिए। नहीं। (मौन) हां, यह अंधेरा, यह सन्नाटा, अच्छा लग रहा है। इसका स्पर्श रोम रोम में हो रहा है। अब त्वचा पर। मांस मज्जा और हड्डियों को बेंधता हुआ, रक्त शिराओं से टकरा रहा है। गरम लहू बह रहा है। यह अंधेरा-सन्नाटा, इसका रंग गहरा नीला···। कौन? कौन? करणम। (करणम का आना) तुम यहां से गये नहीं?

करणम : आपने मुझे याद किया, सेवा में आ गया। आज्ञा दीजिए।

बलराम : मैंने तुझे कब याद किया? याद करते ही यहां कैसे पहुंच गया?

करणम : क्षमा करें महाराज। आज्ञा दें।

बलराम : मुझे इस तरह क्यों देख रहा है?

करणम : उन्हीं नाचने गाने वालों को ले आऊं?

बलराम : हैं कौन?

करणम : अच्छे लगते हैं न?

बलराम : बहुत अच्छे।

करणम : अपने ही लोग हैं, तभी अच्छे लगते हैं।

बलराम : कहना, शोर नहीं, नृत्य।

करणम : हां कोई जाने नहीं। अकेले में, अकेला मैं

[जाना।]

बलराम : यहां किसी विषय में जी नहीं लग रहा। करण ···चला गया। कितना रहस्यमय है। वह दौड़ता है। दौड़कर आता है। दौड़ता हुआ जाता है—कुलाचें भरते हुए।

[दूर से नृत्य संगीत का सुनाई देना।]

बलराम : कैसा आकर्षक है। ये नाचते हुए आ रहे हैं। घने वृक्षों के अंधेरे में ये दौड़ते-नाचते-गाते-बजाते···।

[करणम के साथ युवकों का मोहिनी सहित नाचते हुए आना। संगीत-नृत्य से सारा वातावरण भर जाता है। करणम उन्हें रोक कर कुछ कहना चाह रहा था।]

बलराम : रोको नहीं। कोई बाधा नहीं। रोको नहीं बाधा नहीं।

करणम : (जनान्तिक) इसका नाम है इंदूर···सबसे अधिक शक्तिशाली है। यह है मोहिनी। यह है कुंजल। यह है कपी। और यह है आजीव। इअ ···हां, जवानी की सुगंध विपरीत दिशा में ही बहती है।

बलराम : करणम। जाओ अब यहां से।

करणम : जैसी इच्छा महाराज।

[जाना]

बलराम : ऐसा लग रहा है, रथ पर चढ़ा जा रहा हूं। सब कुछ इस संगीत में भूल रहा है। रथ दौड़ रहा है इतने वेग में है कि इसके पीछे जो धूल उड़ रही

है वह मुझे छू नहीं सकती। धूल कण जो पहले यहां थी, अब कहां होगी। मैं अपने साथ केवल गति महसूस कर रहा हूं। ताप बढ़ रहा है। बसन्त को खदेड़ रहा है। बसन्त भाग रहा है। रोमहर्षण !

[हंस पड़ना। संगीत नृत्य और तेज। रेवती का दौड़ते हुए आना। पूरे दृश्य को देख आश्चर्यचकित रह जाना।]

चौथा दृश्य

समय प्रातः काल।

[परिचारिका बैठी चन्दन घिस रही है। परिचारिका का आना और आगे बढ़ना।]

आनापान : अरे कहां भागे जा रहे हो। जैसे कहीं लड्डू फूट रहा है। अभी महल का दरवज्जा नहीं खुला, हां, महारानी ने सबको बाहर कर, भीतर से बंद कर लिया। कहा, जब मैं खोलूंगी तभी खुलेगा।

सांडव : अच्छा किया। मर्द को घर में बांधकर रखना चाहिए। अब जायं गंध मूल के पीछे और भटकें (बैठना) अरे आना, तेरा मुख किस लड्डू से कम है।

आनापान : देख, सांडव, कान खोलकर सुन ले। मेरा नाम आना नहीं आनापान है।

सांडव : आना ही अच्छा लगता है। आना। आना। आना। आना।

आनापान : जानते हो न, जो इहां शोर मचायेगा···।

सांडव : हां, हां, उसे मोर काटेगा। पर यहां तो मोर है

ही नहीं। मोर ब्रजभूमि में हैं। पता नहीं कहां से एक मोरनी जरूर आयी है।

आनापान : मोरनी नहीं उसका नाम मोहिनी है।

सांडव : होगा उसका नाम। मैं तो तुम्हें कह रहा हूं··· आना आना आना ना···।

आनापान : (गाने की नकल) ना ना ना ना···जैसे फटा बांस (सांडव गाने की कोशिश में) ज्यादा बड़बड़ाओ नहीं। ये लो फूल गूंथो

[एक पात्र में देना।]

सांडव : आना। ओरी आना। एक बार मेरी ओर देख-कर मुस्करा दे तो एक बात बताऊंगा, जिसका बताना मना है, हां।

आनापान : फिर क्यों बताना चाह रहा है ? चुपचाप अपना काम कर।

सांडव : अरे वह जो बात है न, गजब रे गजब। भूल गयी महाराज-महारानी पहले दिन जब यहां आये थे, और मुझे तुम ढूंढ़ रही थी। मैं कहीं गुम हो गया था। उसका नाम करणम है। सख्त मना किया था, खबरदार, मेरा नाम पता किसी को नहीं बताना, हां।

आनापान : मुझे भी यही कहा था।

सांडव : क्या ? उससे मिली है ? झूठ, मुझे उल्लू बना रही है। कैसा था ?

आनापान : दुबला पतला।

सांडव : कैसे देखता था ?

आनापान : टकटकी लगाकर घूरता था।

सांडव : (उठना) लुच्चा बदमाश धोखेबाज। रुक, अभी

उसकी खबर लेता हूं।

[जाने लगना। सामने गोपी।]

आनापान : गोपी। गोपी।

सांडव : लेव आई गये गोपी गोपी।

आनापान : तू जहां जा रहा था, जा ना।

सांडव : अब मैं नहीं जाता। यह फूलमाला भी नहीं बनाता।

गोपी : ओ हो। इत्ता गुस्सा ठीक नहीं। गुस्सा थूंकि देव या तो घूंटिकै पी जाव।

सांडव : अरे उस करणम को मैंने घरणम न बनाया तो मेरा नाम सांडव नहीं।

गोपी : अरे करणम तो बड़ा सीधा गऊ जैसा है।

सांडव : क्या, तुम्हारी भी मुलाकात करणम से हुई ?

गोपी : मेरे ही पास रहता है।

सांडव : अभी महाराज को बताता हूं।

गोपी : महाराज से भी परसों रात करणम की भेंट हुई है।

आनापान : सच ?

सांडव : ऐसा ?

गोपी : हां।

सांडव : यह करणम है कौन ?

[मौन]

गोपी : इहां काहे बैठे हो ?

सांडव : महल का दरवज्जा भीतर से बंद है।

गोपी : कन्हैया को छोड़कर आये हैं, विहार करने। प्यार का रस पहिचाना नहीं, गंध के पीछे पीछे दोड़े हैं।

आनापान : महारानी बहुत परेशान हैं।

सांडव : बड़े अचरज की बात है, ई शादी कैसे हुई?

आनापान : चुप। जो मुंह में आता है बक देता है।

गोपी : ऐसा है कि राजा रैवत अपनी पुत्री रेवती के साथ ब्रह्माजी के पास गये। कहा कि आपकी सृष्टि में जो सर्वश्रेष्ठ होगा, उसी के साथ अपनी कन्या का विवाह करूंगा। ब्रह्माजी बोले, जाओ द्वारका और अपनी कन्या का विवाह बलराम जी से कर दो। रेवती बहुत लम्बी थी, सतयुग की लड़की। बलराम द्वापर के। तो लम्बी लड़की से छोटे लड़के का विवाह कैसे हो? बलराम जी बोले कि कोई बात नहीं। मैं ठीक किये देता। अपना हल उठाकर रेवती के कंधे पर लगाया। नीचे की ओर खींचा तो रेवती बलराम जी के बारबर हो गयीं।

[हंसी]

गोपी : हुई···हुई···आना···हुर्रर। ई गइया लोग कैसी हैं, जिधर मुंह उठाया उधर चल पड़ीं।

[जाना]

सांडव : हैय। महल द्वार खुल गया। चल।

आनापान : चलो, आती हूं।

सांडव : ना बाबा, रंगमहल में अकेले जाना, मुझे डर लगता है। महाराज इधर ही आ रहे हैं। महारानी भी।

[दोनों का जाने लगना, बलराम और रेवती से दोनों का आंख बचाकर जाना।]

बलराम : तुम रुको, मैं अभी घूमकर आ जाता हूं। इसे

लौटकर पी लूंगा।

रेवती : यह औषधि नहीं, मधु-रस है।

बलराम : हरदम खाना पीना।

रेवती : अकेले नहीं जाने दूंगी।

बलराम : इस महल में मेरा दम घुटता है। जितने कमरे हैं सबमें भोगों की सामग्री भरी है। नौ दरवाजे सब में इतनी दूरियां, देखने और निकलने के लिए सिर्फ दो दरवाजे, सुनने के लिए दो दरवाजे सूंघने के लिए दो दरवाजे अलग। स्वाद लेने के लिए कहीं बाहर जाना हो, उसके लिए केवल एक दरवाजा।

[जाने लगना। रेवती का रोकना।]

रेवती : आप के लिए सारे दरवाजे खुले हैं।

बलराम : हर दरवाजे पर जैसे कोई पहरेदार बैठा है।

रेवती : मैं भी साथ चलूंगी।

बलराम : अपने साथ क्यों नहीं जातीं?

रेवती : देखो···सुनो, चाखो मेरी काया की गंध।

बलराम : कोई गंध नहीं।

रेवती : गंध विषयों में नहीं, इन्द्रियों में नहीं। देखो, इन दोनों के बीच है।

बलराम : कहीं और है।

रेवती : तुम्हारे अन्दर है।

बलराम : मेरे अन्दर? एक सांस भीतर, एक बाहर। एक का भागना। दूसरे का पीछा करना। इसके अलावा कुछ नहीं।

रेवती : अच्छा, जाइए। मैं राह देख रही हूं। जाइए न अब।

बलराम : हाथ-पांव अंधे हैं। ले जाने वाली इन्द्रियां हैं। इन्द्रियों के पीछे प्राण एक नहीं पांच। प्राणों के पीछे मेरा स्वभाव। स्वभाव ही सब कुछ कर रहा है। मैं अपने स्वभाव को नहीं जान पाता।

[सहसा संगीत सुनाई देना।]

बलराम : नहीं, रोको नहीं। आने दो।

[मोहिनी का आना। साथ में आजीव।]

बलराम : और लोग कहां हैं ?

मोहिनी : सो रहे हैं।

आजीव : इसे नींद नहीं आती।

[बलराम का घास पर लेट जाना। रेवती के संकेत से परिचारिका चंदन ले आती है। अवसर देखकर पति के चरण तालुकाओं में चंदन लेप करना।]

मोहिनी : कैसा लग रहा है ?

बलराम : तुम से कोई पूछे कि तुम कौन हो, बता सकती हो ?

मोहिनी : एक अनाथ शिशु जिसके मां बाप गृहयुद्ध में मारे गए। किसी दयालु सामन्त के घर में पलकर जब मैं किशोरी हुई, तभी से सारे लोग रूप और यौवन पर···। भयभीत भागी। भागती रही। अब तक भाग रही हूं। मेरे पीछे जितने पुरुष उतने नाम···सुन्दरी, वेश्या, कुल्टा, गणिका, जनपद कल्याणी, रमणी···(विराम) आपका नाम बचपन से ही सुनती आ रही हूं। आपने क्या क्या किया, सब जानती हूं।

रेवती : मोहिनी।

बलराम : टोको नहीं। निर्भय होकर बोलो। मैं कहां कहां तीर्थयात्रा में गया, जानती हो ? नेमिषारण्य की घटना जानती हो ?

मोहिनी : नहीं।

बलराम : कभी किसी सूतपुत्र का नाम सुना है ? कोई कथा सुनी है ? रोमहर्षण। रोम का हर्षण।

[मौन]

रेवती : आर्य, एक कथा कहूं ?

बलराम : कथावाचक कौन है ? क्रोध क्यों होता है ? कोई कथा है, जो उत्तर दे ?

रेवती : ब्रह्माजी ने जब सृष्टि प्रारम्भ की तो सबसे पहले राक्षसों की सृष्टि हुई। वे भखे प्यासे दौड़ ब्रह्माजी को खाने। ब्रह्माजी भगवान के पास गए। भगवान ने कहा शरीर छोड़ दो। ब्रह्माजी ने जब शरीर छोड़ा तो सांझ हो गयी···

बलराम : बस बस, ऊब होने लगती है। तुम कोई कथा जानती हो ?

मोहिनी : नहीं।

बलराम : जानना चाहती हो ?

मोहिनी : वह स्यमंतक मणि कथा। वह क्या है ? कहां है वह, जिसके कारण कृष्ण से गुस्सा कर आपने द्वारिका छोड़ दी ? सब के मना करने पर भी राजा जनक के राज में रह कर दुर्योधन को गदा युद्ध की शिक्षा दी ?

बलराम : बस, अब रहने दो न।

रेवती : बात कीजिए न, इधर क्यों ध्यान देते हैं ?

बलराम : देता नहीं, चला जाता है।

रेवती : क्षमा कीजिए।

[विराम]

आजीव : आज वर्षों बाद मानो इसकी वाणी फूटी है।

बलराम : कभी कोई कथा सुनी है?

मोहिनी : नहीं, कहानी सुनी है।

बलराम : कभी कोई यात्रा की है?

मोहिनी : यात्रा? यात्रा क्या होती है?

बलराम : बस रहने दो।

रेवती : इन्हें आराम करने दो।

बलराम : (स्वगत) मैंने यात्रा नहीं की। यात्रा का बहाना किया। ~~बहाना···रोमहर्षण~~···रोमहर्षण।···मेरे रोम रोम में जलन···रणछोर। तुम्हारे रोम रोम में हर्षण।

[मौन]

मोहिनी : भागती रही हूं। यही सुनती रही, कोई यात्रा नहीं, कोई तीर्थ नहीं, केवल गति···गति।

बलराम : बैठो। सुनो स्यमंतक मणि कथा। कृष्ण हस्तिनापुर थे। महिषी सत्यभामा बीमार पड़ीं। सिर में भयंकर पीड़ा। अक्रूर ने कहा—महिषी को स्यमंतक मणि का स्पर्श करा दिया जाय, सारी पीड़ा समाप्त। मणि सत्राजित के पास था। उसके देने से सारी पीड़ा समाप्त। मणि सत्रजित के पास था। उसने देने से मना कर दिया। अक्रूर ने सोचा, मणि की चोरी करा ली जाय। जब भी काम न बना तो अक्रूर ने अपने मित्र शतधन्वा से सत्रजित का वध करा दिया। पर

शतधन्वा स्वयं मणि लेकर भागा। शतधन्वा के पीछे अक्रूर दौड़ते हैं। अक्रूर के पीछे कृष्ण। शतधन्वा को पकड़कर उसके पास खोजने पर जब वह मणि नहीं मिली तो मैंने कृष्ण से पूछा —स्यमंतक मणि कहां है? कृष्ण ने कहा—मणि शतधन्वा के पास नहीं मिली। मैंने कहा—झूठ धिक्कार। कृष्ण ने मणि छिपा ली। मैंने कृष्ण को डांटा और क्षुब्ध हो वहां से चला गया।

[इस बीच वह कथा सुनने गोपी का आना। गोपी का अन्त में हंस पड़ना।]

बलराम : (मोहिनी को देख) अरे यह तो सो गयी।

आजीव : पिछले कितने दिनों से यह सोयी नहीं। इसे अनिद्रा रोग था।

गोपी : कहानी सुनाने के लिए ही होती है। यह कथा नहीं, कहानी थी। कथा में कोई 'मैं' नहीं होता —'मैंने' 'मैं' वाह। बड़े आए कृष्ण के सामने मैं मैं मैं मैं करने।

[इस बीच मोहिनी का जग जाना।]

रेवती : गोपी। कोई गीत गा।

गोपी : इनके सामने गीत? पूछो कभी प्रेम किया है?

[रेवती का एकटक देखना।]

गोपी : प्रेमी होते तो लड़ाई से मुंह चुराइ के नाहीं भागते। कन्हैइया को छोड़ि आए। (विराम) कौरव-पांडव जब बात नहीं माने, तो उनपे प्रहार काहे नाहीं किया? गरीब गऊ सूतपुत्र को मारा। कन्हैइया ने कभी किसी गरीब निर्बल को मारा है? चले हैं कथा कहने।

बलराम : मैं कभी रण से नहीं भागा।

गोपी : अभागा।

बलराम : गोपी।

गोपी : आंखिन तरेरो नहीं, हम गोपी हैं। गइयन चराते हैं।

बलराम : मैंने भी चराई हैं।

गोपी : तो अब काहे नाहीं चराते? तभी तो पशु तुम्हें चर रहे हैं। देखो न, हमरे घनश्याम लड़ाई में रथ हांकि रहे हैं।

मोहिनी : गोपी, क्या है स्यमंतक मणि कथा?

गोपी : अरे जो स्यमंतक मणि धारन करता है न, उसकी छाती से सोने की वर्षा होती है। जैसे कपड़े को सूई से सी देते हैं न, वैसे मनुष्य एक दूसरे के साथ जब अपने आप को सी करके स्वयं को देखेगा, तभी स्वमंतक कथा समझेगा।

मोहिनी : स्वयंतक नहीं, स्यमंतक।

गोपी : शब्दों के चक्कर में रहो। अपन तो गऊ चराते हैं, उन्हीं की बांसुरी टेरते हैं।

[चला जाना।]

बलराम : गोपी। गोपी।

[अंगरक्षक का आना।]

रक्षक : महाराज, गोपी चला गया—जंगल में। उसे ढूंढ पाना अब असम्भव है। उसकी जब कहीं बांसुरी बजेगी तो वहीं से ले आऊंगा।

[चारों ओर से नृत्य-संगीत समारोह ध्वनि प्रभाव से सारा परिवेश बंधने लगता है। बलराम का परेशान होना अंगरक्षक का

बाहर जाना। थोड़ी ही देर में आना।]

रक्षक : आपके सम्मान में राज्य की ओर से समारोह आयोजन है।

बलराम : मुझे कोई मान-सम्मान नहीं चाहिए।

रक्षक : राज्य के लिए यह अनिवार्य है।

बलराम : क्यों?

रक्षक : क्षमा हो महाराज। तिथि और अतिथि के बहाने प्रजा का मनोरंजन होता है। मुझे बताया गया है···।

बलराम : बुलाओ राजा रैवत को।

रक्षक : राजधानी दूर है महाराज।

रेवती : शांत। (अंगरक्षक पास आता है।) जरा भी समझ नहीं।

[संकेत भाषा में कुछ कहना। अंगरक्षक का जाना। चारों ओर से नृत्य और संगीत, जैसे बाढ़ के जल की तरह उफनता घेरता चला आ रहा है। नृत्य करती हुई तमाम रमणियों के साथ—इंदूर, कुंजल और रूपी हैं। उनके साथ मोहिनी और आजीव का भी नृत्य करने लगना। पूरे दृश्य के साथ बलराम का भाव-विभोर होना। परिचारिका को साथ लेकर रेवती का नृत्य करना। अपने साथ बलराम को नृत्य में शामिल करने का रेवती का असफल प्रयास। बलराम का भागना। रेवती और आनापान का पीछे दौड़ना। नृत्य-संगीत का अपनी चरमसीमा पर जाकर सम पर आने से पहले पृष्ठभूमि में चला जाना। अकेले बलराम का आना।]

बलराम : वहां महाभारत का भयंकर युद्ध, यहां राज्य समारोह। राज्य को अपने अलावा और किसी की चिन्ता नहीं ? मेरी भी नहीं ? कौन ? कौन है ? लगता है, कोई हर समय मुझे···। कौन ? कोई नहीं, कोई यहां कैसे आ सकता है ? पर वह महाभारत वह नेमिषारण्य···वह रोमहर्षण वह यहां से दिखता कैसे है, नहीं, मैं इस दृश्य से कैसे निकल सकता हूं। (भागना उछलना, कूदना, उड़ने का असफल प्रयास करना) यहां पानी कहां से ? चारो ओर पानी ? मैं इसे तैर सकता हूं। उस पार से इस पार आ गया। कोई प्रयत्न नहीं कैसा मनोरंजन है ? यह सब कितना ऊबाऊ है। क्या यह पानी नहीं आंसू है ? युद्ध में आंसू बहता है ? कौरव-पांडव सब पहले एक थे। हम दोनों एक कृष्ण बलराम थे पहले। (देखना) कौन ? सामने आए।

[इन्दूर, कुंजल, कपी, आजीव और मोहिनी का घुटने के बल आना।]

बलराम : कौन हो तुम लोग ? कहां से आये ? चाहते क्या हो ? यहां क्यों आए ? बोलते क्यों नहीं ?

[करणम का आना।]

बलराम : करणम। ये कौन हैं। कभी आकृष्ट होता हूं—कभी घिन आती है इनसे। कैसी गंध आ रही है ? मेरी नाक जैसे कुछ सूंघ रही है। मानो मेरी सभी इन्द्रियां, इन्हें पहचानना चाह रही हैं। इन्हें टटोल रही हैं। यहां मुझे सुख मिलता

है। यही सुख मैं हूं। इस पर जो आघात करे उसे क्षमा नहीं। वह कोई हो, कहीं हो, कुछ कोई कहीं हो।

करणम : महाराज। आपकी एक स्थिति हस्तिनापुर की थी, दूसरी द्वारिका की, तीसरी नैमिषारण्य की, यहां इस समय बिल्कुल नयी स्थिति आयी है। पर एक स्थिति दूसरी स्थिति को स्वीकार नहीं है। आप चाहते हैं वही कायम रहे जो आपको प्रिय है। नहीं, हां, नहीं से रचित ये आपकी अतृप्त वासनाएं हैं···अवचेतन पशु। इन्हें स्वीकार कर अंगीकार करो महाराज। जो आपका है, वही आपके पास आया है।

बलराम : ये राजा के लोग हैं।

करणम : आपकी प्रजा है महाराज।

बलराम : मुझे इस तरह क्यों देख रहे हैं ?

करणम : उत्सुकता है किसी गहरे रिश्ते के कारण।

बलराम : इनसे मेरा कोई रिश्ता नहीं।

करणम : भूल गए हैं। पर रिश्ता नहीं भूलता।

[पृष्ठभूमि में आवाज।]

बलराम : यह कैसी आवाज ?

करणम : पेड़ काटे जा रहे हैं। आप पेड़ों के नीचे बैठते हैं अकेले, चुपचाप राजा डर गया है। पेड़ में संवेदना होती है। संवेदना संक्रामक होती है।

बलराम : पेड़ जड़ से काटे जा रहे हैं ?

करणम : राज्य व्यवस्था सांस्कृतिक जड़ों से डरती है।

[हंसना]

बलराम : अरे। ये सब सो गये।

[सब का सो जाना।]

करणम : वंचित-अस्वीकृत केवल भूख से जगता है। उसी से थक कर सो जाता है। देखो। छुओ।

[बलराम उन्हें छू कर देखते हैं।]

बलराम : इसी तरह सोते रहेंगे ?

करणम : भूख लगते ही उठ जायेंगे।

बलराम : मेरा शरीर और मन कभी नहीं सोता।

करणम : अनन्त-अतृप्त इच्छायें किसी परम मोहन को तृप्त करने के लिए सदा व्याकुल रहती हैं।

बलराम : हर काम के साथ उद्वेग आता है।

करणम : वही राग है।

बलराम : राग के समान और कोई अग्नि नहीं ?

करणम : इस अग्नि से यज्ञ करो महाराज। यज्ञ में इन्हीं की बलि दो।

बलराम : हर सुन्दर को पाने की इच्छा होती है। हर असुंदर से विरत रहने की।

करणम : इसीलिए क्रोध आता है। (रुककर) नेमिषारण्य तीर्थ में सूत की जिस तरह हत्या की, उसका प्रायश्चित···।

बलराम : चला जा यहां से। फिर कभी मेरी आंखों के सामने आया तो···

करणम : जो आज्ञा महाराज। जैसी आपकी इच्छा।

बलराम : रुको। प्रायश्चित क्या है ?

करणम : प्रायश्चित में जो प्रायः शब्द है, उसका अर्थ है पाप। चित का अर्थ है विशोधन।

बलराम : मैंने कोई पाप नहीं किया।

करणम : सूत परम्परा को बदलने का अहंकार किस पाप

से कम है ?

बलराम : तपस्या, चन्द्रायण व्रत, गंगा स्नान करूं ?

करणम : शरीर शुद्धि हो जायगी पर जिस हृदय में अहंकार है, वह हृदय शुद्ध नहीं होगा। जहां भी कोई निमित्त, बहाना दिखेगा, काम, क्रोध, लोभ वासना अपना काम करा लेगी। यही हृदय में है। यही तीनों तरफ से द्वार हैं।

बलराम : रुको। परम मोहन क्या है ?

करणम : इसका उत्तर स्वयं पाना है।

बलराम : कृष्ण परम मोहन है तो मुझे दंड देने के लिए इन्हें मेरे पीछे क्यों लगा दिया ? क्या लेकर मनुष्य परम मोहन की पूजा कर सकता है ? वासनाओं के सिवा इसके पास और है क्या ?

[पृष्ठभूमि में पेड़ों का कटना। युवकों में से इंदूर का जगना। मोहिनी को जगाना। धीरे-धीरे सब का जगना।]

निर्देशक की कापी

दूसरा अंक

INTERVAL

पहला दृश्य

[समय—दोपहर। करणम छिप जाता है।]

करणम : (पुकारना-संकेत करना) पंचम। ओ पंचम। इधर आ।

[पंचम का आना।]

करणम : पास आ।

[पंचम का मना करना।]

करणम : डर नहीं। अब हाथ नहीं मारता। भाई दिन-रात इतना काम क्यों करता है? आ मेरे साथ। स्वर्ण-दीप की सैर कराऊं। (हाथ मारकर) क्या महल में बैठा मक्खियां मारता है?

पंचम : तेरी आदत नहीं जाएगी।

करणम : तेरे साथ ही यह आदत क्यों भड़कती है।

पंचम : गरीब-निर्बल हूं।

करणम : अरे जाता कहां है? महाराज तो राजवैद्य की दवासेवा में हैं।

पंचम : मालिक का कष्ट मुझसे देखा नहीं जाता। ना जाने क्या हो गया है।

[सांडव और आनापान की हंसी।]

करणम : आओ इन्हें छिपकर देखें।

पंचम : छिपो-लुकावो तुम। मैं क्यों छिपूं-लुकाऊं ?

[पंचम का जाने लगना।]

करणम : चल, तुझे घुमा लाऊं।

पंचम : घूमना, छिपना, भागना तेरा काम है। मेरा नाम मेरा काम। दूसरे चक्कर में नहीं पड़ता ?

[पंचम का जाना]

करणम : बाप रे कितनी समझ है इस अनजान को। जो है, वही है। कुछ और नहीं चाहता। हम हैं कि जो है उसे छोड़कर कुछ और होना चाहते हैं। पर जो बीज में नहीं है, वह वृक्ष में कैसे हो सकता है ? जो है, उसे छोड़कर कुछ बनने की इच्छा, दूसरे ही रास्ते पर मोड़ देती है, जीवन केन्द्र से इतनी दूर।

[सांडव और आनापान का हंसते हुए आना। करणम का छिपकर देखना।]

करणम : (जनान्तिक) यहां सब वही होने, नहीं बनने की दौड़ में है, जो नहीं है।

[आनापान का बैठना।]

करणम : महाराजा को ज्वर है, तुझे हंसी दिल्लगी सूझ रही है। व्यक्ति जो बीजतः होता है, उसके जीवन में न तो दौड़ धूप होती है, न ज्वर होता है।

[सहसा]

आनापान : अरे। यह कौन है ?

करणम : भक्क। टकटकी।

सांडव : यही करणम है···करणम।

आनापान : नहीं भक्क। टकटकी।

सांडव : करणम।

करणम : भक्क। टकटकी।

[करणम का जाना। सांडव का उसके पीछे भागना। पृष्ठभूमि में वही नृत्य संगीत।]

आनापान : इन्हें कोई डर नहीं। महाराज को ज्वर है। ऐ जाओ यहां से। दूर हटो। नहीं मानोगे ? (सहसा) महारानी के साथ महाराज आ रहे हैं।

[उनका आना। संगीत बन्द।]

बलराम : सामने आवो। सामने आवो।

[मोहिनी के साथ सब युवकों का आना। मोहिनी के हाथ-पैर बंधे हैं।]

बलराम : यह क्या है ?

इंदूर : यह नाच नहीं रही थी। इसे बांध कर नचा रहा था।

बलराम : ऐसा क्यों करते हो ?

इंदूर : अच्छा लगता है।

बलराम : अच्छा लगना ही तुम्हारे कर्म की प्रेरणा है ?

इंदूर : तुम्हारी प्रेरणा क्या है ?

[असभ्यतापूर्ण हंसी]

बलराम : नीच।

इंदूर : हम नीचे रहते हैं।

कुंजल : तुम मणिमहल में रहते हो हम भूमि तल पर।

[हंसी]

कपी : तुम्हें मन की भूख है, हमें तन की।

इंदूर : तुम भागकर आए हो, हम यहीं हैं।

[हंसी। बलराम का क्रोध। इंदूर, कुंजल और कपी का भागना। आजीवका मोहिनी को बंधन मुक्त करना।]

बलराम : दुराचारी विद्रोही बने हैं।

मोहिनी : हां, दुराचारी विद्रोही बना है। पर मेरी आसक्ति उसी पर है। बोलो, आसक्ति के अलावा भी कुछ है यहां? इस जंगल में इंदूर ने ही मेरी रक्षा की। उसके संगीत पर जब नाचती हूं तो सब कुछ भूल जाती हूं।

बलराम : भूलना···?

मोहिनी : आप यहां वही भूलने नहीं आए हैं?

बलराम : क्या?

मोहिनी : आपको ही पता होगा।

[बलराम पर उल्टी होने का प्रभाव, रेवती का अपनी परिचारिका सहित उनकी सेवा।]

मोहिनी : इन्हें खारा जल पिलाओ। इस औषधि से यह स्वस्थ होंगे।

रेवती : खारापानी?

मोहिनी : पसीना और आंसू।

बलराम : एक दिन मैंने देखा था यहां जल ही जल।

मोहिनी : जल नहीं, खारा पानी।

[हंसना]

रेवती : बन्द करो यह निर्लज्ज हंसी। तुम्हें दुख था कि लोग वासना भरी नजरों से देखते थे। कल्पना

करो, कहीं इससे उलटा हुआ होता। किसी ने तुम्हारी ओर आंख उठाकर देखा ही न होता?

मोहिनी : आपकी तरह कल्पना करने का मुझे कभी समय ही न मिला।

रेवती : कल्पना नहीं, यह प्रश्न है।

मोहिनी : छिपा रही हैं, यह आपका प्रश्न है। मेरा प्रश्न मैं स्वयं हूं—जो मेरे अस्तित्व में है—मेरा भय, मेरी भूख, आसक्ति, मेरा अलगाव-प्रिया होकर प्रेम नहीं जानती। जितना जानने की कोशिश करती हूं, उतनी ही अकेली होती जा रही हूं···। (सहसा) डर गए? ड···र···गए।

[हंसना]

बलराम : रुको।

रेवती : यह क्या करते हैं। कोई देखेगा तो क्या कहेगा?

[मोहिनी को पकड़ रखना।]

बलराम : यहां देखने वाला और कोई नहीं है। सम्बन्ध केवल उसी से है, जो मेरे अस्तित्व में है।

रेवती : छोड़िए। जा यहां से।

बलराम : (देखते रह जाना)

मोहिनी : स्यमंतक···स्वयं···अंत तक

[हंसना]

मोहिनी : हर कोई एक ही जन्म में दूसरा जन्म नहीं ले सकता। तुम पहले स्वयं क्या हो?

~~[अंगूठा दिखाती हुई दूर जाना।]~~

रेवती : मोहिनी।

~~[जीभ दिखाकर भागना।]~~

रेवती : (परिचारिका से) कहीं गौए चरा रहा होगा

गोपी। बुला लाओ। इनका जो बहल जोएगा।

[जाती है।]

रेवती : उधर क्या देख रहे हैं ? अभी गोपी आयेगा। हम उनके साथ गायेंगे, नाचेंगे।

बलराम : असम्भव है मेरे लिए।

रेवती : इधर देखिए—अगाध सौन्दर्य, चारों ओर घिरे तमाल, सिंधुवार, कर्णिकार। झरते मकरन्द, पुष्पभार से झुके हुए गंधराज, पारिजात, कचनार-परिमल-पराग की वर्षा।

[बलराम के सिर पर पुष्पमाला बांधना।]

रेवती : कितना सुन्दर है।

बलराम : आह। तुम्हारे तन के रोमों में कन्दक-केतकी पुष्पों की राशियां रोमांचित हैं।

रेवती : हमारा काम केवल काम नहीं —मधुर आनन्द··· कामोत्सव

[नाचती हुई रेवती को पकड़ना।]

बलराम : तुम्हारे स्पर्श में सर्पवलयितचन्दन लतायें लिपटी हैं।

रेवती : आपका शरीर। रुकिए, अंगराग घोल में चन्दन मिलाकर ले आयी हूं। छोड़िए तो, एक क्षण के लिए।

बलराम : ये सब बाहरी उपचार मेरे भीतर की बाध्यता, तनाव में प्रतिक्रिया घोलते हैं।

रेवती : हमारा सहवास भी क्या बाहरी है ?

बलराम : सब विवशता से प्रेरित, क्रिया से उत्पन्न व्यवहार, यांत्रिक क्रियाएं हो जाती हैं···पुनरावर्तित क्रियाएं···मैं उसी कर्म से भागकर क्रिया

के जंगल में फंसा हूं। पता नहीं मुझमें कितना···।

रेवती : यह पी लीजिए।

[बलराम का पीना।]

रेवती : शांति से चुपचाप···।

[परिचारिका के साथ गोपी का आना।]

गोपी : हैं। ऐसे काहे देखते हो ?

बलराम : कैसे देखूं ?

गोपी : तुम तो दिखाते हो, देखोगे कहां से ? पूरे जंगल में से पेड़ की एक पत्ती सब से अलग होकर विहार करने चली है। बूझे लाल बूझक्कड़ और न बूझे कोय, पैर में चक्की बांधि के हरिना कूदा होय···

रेवती : गोपी, तुम बांसुरी बजाओ, हम नाचें। तू जा।

[आनापान का जाना।]

गोपी : ओई···ठर्र···ठर्र···चल···हट्ट···। पशु जात, जिधर जी चाहा, पूंछ उठाय चल दिया। जब से इहां आए हैं, बड़े चिंतित हैं। अरे सुनो, हमरे कन्हैया कैसे हैं ? सुना है महाभारत की लड़ाई मां रथ हांकि रहे हैं। बड़े मुरहा हैं।

[गोपी का बांसुरी बजाना। रेवती का संगीत के साथ नृत्यवत् गतियों में आना। अपने साथ बलराम को नृत्य में जोड़ने का असफल प्रयत्न। गोपी का हंसना।]

गोपी : अरे रे रे। तुम तो बहि रहे हो, बहो नहीं डूबो। और उतरि जाव वहि पार।

[फिर बांसुरी संगीत। नृत्यवत् रेवती अदृश्य हो जाती है। बलराम का व्याकुल होना।]

गोपी। बुला लाओ। इनका जी बहल जाएगा।

[जाती है।]

रेवती : उधर क्या देख रहे हैं ? अभी गोपी आयेगा। हम उनके साथ गायेंगे, नाचेंगे।

बलराम : असम्भव है मेरे लिए।

रेवती : इधर देखिए—अगाध सौन्दर्य, चारों ओर घिरे तमाल, सिंधुवार, कर्णिकार। झरते मकरन्द, पुष्पभार से झुके हुए गंधराज, पारिजात, कचनार-परिमल-पराग की वर्षा।

[बलराम के सिर पर पुष्पमाला बांधना।]

रेवती : कितना सुन्दर है।

बलराम : आह। तुम्हारे तन के रोमों में कन्दक-केतकी पुष्पों की राशियां रोमांचित हैं।

रेवती : हमारा काम केवल काम नहीं —मधुर आनन्द··· कामोत्सव

[नाचती हुई रेवती को पकड़ना।]

बलराम : तुम्हारे स्पर्श में सर्पवलयितचन्दन लतायें लिपटी हैं।

रेवती : आपका शरीर। रुकिए, अंगराग घोल में चन्दन मिलाकर ले आयी हूं। छोड़िए तो, एक क्षण के लिए।

बलराम : ये सब बाहरी उपचार मेरे भीतर की बाध्यता, तनाव में प्रतिक्रिया घोलते हैं।

रेवती : हमारा सहवास भी क्या बाहरी है ?

बलराम : सब विवशता से प्रेरित, क्रिया से उत्पन्न व्यवहार, यांत्रिक क्रियाएं हो जाती हैं···पुनरावर्तित क्रियाएं···मैं उसी कर्म से भागकर क्रिया

के जंगल में फंसा हूं। पता नहीं मुझमें कितना···।

रेवती : यह पी लीजिए।

[बलराम का पीना।]

रेवती : शांति से चुपचाप···।

[परिचारिका के साथ गोपी का आना।]

गोपी : हैं। ऐसे काहे देखते हो ?

बलराम : कैसे देखूं ?

गोपी : तुम तो दिखाते हो, देखोगे कहां से ? पूरे जंगल में से पेड़ की एक पत्ती सब से अलग होकर विहार करने चली है। बूझे लाल बुझक्कड़ और न बूझे कोय, पैर में चक्की बांधि के हरिना कूदा होय···

रेवती : गोपी, तुम बांसुरी बजाओ, हम नाचें। तू जा।

[आनापान का जाना।]

गोपी : ओई···ठर्र···ठर्र···चल···हट्ट···। पशु जात, जिधर जी चाहा, पूंछ उठाय चल दिया। जब से इहां आए हैं, बड़े चिंतित हैं। अरे सुनो, हमरे कन्हैया कैसे हैं ? सुना है महाभारत की लड़ाई मां रथ हांकि रहे हैं। बड़े मुरहा हैं।

[गोपी का बांसुरी बजाना। रेवती का संगीत के साथ नृत्यवत् गतियों में आना। अपने साथ बलराम को नृत्य में जोड़ने का असफल प्रयत्न। गोपी का हंसना।]

गोपी : अरे रे रे। तुम तो बहि रहे हो, बहो नहीं डूबो। और उतरि जाव वहि पार।

[फिर बांसुरी संगीत। नृत्यवत् रेवती अदृश्य हो जाती है। बलराम का व्याकुल होना।]

बलराम : रेवा। रेवा कहां गयी ?

[गोपी का हंसना]

बलराम : बन्द करो यह हंसी।

गोपी : गुस्सा न करो। लेव बांसुरी बजाओ। फूंको। ओऊ, मारे गुस्सा के दम फूल रहा है। औ गुस्सा करो। और सुरापान करो। गुस्सा लेक विहार करने आए हैं। हमरे कन्हैया के असं गोपियां—तुम्हारे सिरिफ एक लेव वह भी भा गयीं। फूंको बांसुरी में। गुस्सा थूक देव। ना तो पी लेव। बजाओ, प्रेहरिया दौड़ी हुई आ जाएगी।

[बजाने का असफल प्रयत्न।]

गोपी : क्यों नहीं बजती ? कहां गया संगीत ?

बलराम : पता नहीं।

गोपी : पता लगाओ।

बलराम : लो बजाओ। बजाओ।

[बजाना]

बलराम : क्यों नहीं आयी ?

गोपी : नहीं आयी। अरे डर से बजाया हुआ संगीत कोई संगीत है। राजा डरायेगा तो डर बजेगा।

बलराम : अच्छा, निडर होकर बजाओ।

[बजाना। नृत्यवत् रेवती का आन आत्मविभोर बलराम का रेवती को अंक में लेने का प्रयत्न।]

रेवती : आवो, काम और प्रेम का मिथुन।

बलराम : कोई देख रहा है।

रेवती : कौन ?···गोपी?

बलराम : नहीं, कोई और है।

रेवती : हर इच्छा में हां और ना है। इच्छा पूर्ति असंभव।

बलराम : संभव।

रेवती : तो आवो पूरी करो इच्छा। आवो। इस संगीत की डोर से गहराइयों में उतरते चले जाएं। उठाओ पैर, चलो।

बलराम : इतनी भयंकर गहरी खायी। नहीं···नहीं···। आह।

दूसरा दृश्य

[समय : प्रातःकाल। इंदूर, मोहिनी, कुंजल, और कपी कुछ खा-पी रहे हैं।]

कपी : राजा रैवत ने अपने दामाद की बात मान ली—गाना बजाना बन्द।

इंदूर : राज्य ने बलराम के मनोरंजन की जिम्मेदारी हमें सौंप दी है।

कुंजल : सच ?

इंदूर : अरे राज्य भी किसी को कुछ सौंपता है ? मैंने हड़प ली है। राजा का कोई बेटा-दामाद, सगा-सम्बन्धी नहीं होता। अपने सिवा राज्य किसी की चिन्ता नहीं करता। सब को फंसा अपनी सवारी बनाकर रखता है। यह रहस्य मेरे हाथ लग गया। वहां महाभारत, यहां रैवतक उद्यान···।

[मोहिनी को छेड़ना।]

मोहिनी : क्या करते हो ?

इंदूर : अभी क्या कर रहा हूं ? अभी तो कुछ कर गुजरने की योजना बना रहा हूं। सोचो भला, कोई

कल्पना कर सकता है, ससुर ने दामाद के पीछे गुप्तचर लगा रखा है।

कुंजल : भोग और वैराग्य के बीच जो भगदड़ मची हुई है बलराम में, अरे भगदड़ न कहो, द्वन्द्व कहो, कुछ भी कहो—राजा की चिन्ता स्वाभाविक है।

कपी : भई, अपन पेट तो भर गया। मगर इच्छा नहीं भरी।

कुंजल : किसी एक व्यक्ति की चिन्ता से राज्य की चिन्ता क्यों बढ़ जाती है ?

इंदूर : यही रहस्य है। (हंसना) जब मैं अकेला व्यक्ति था तब शक्ति के बारे में सोचता रहता था—शक्ति थी नहीं अपने पास। जब सब से मिलकर गिरोह बनाया, तो शक्ति आ गयी अपने पास। शक्ति फिर व्यक्ति की चिन्ता नहीं करती। गिरोह की चिन्ता करती है। हां, व्यक्ति अगर सोचने-विचारने लगे तो राज्य उसे बर्दाश्त नहीं कर सकता, वह चाहे सगा दामाद हो या कोई भी हो। (सहसा) अरे, आजीव दौड़ा आ रहा है। इसे भी प्रातःकाल टहलने का रोग है।

[आजीव का आना।]

इंदूर : क्या है ? अरे कुछ बोलेगा भी।

आजीव : बलराम वहां जमीन पर सोये पड़े हैं बिल्कुल अकेले।

इंदूर : हैय। सुनो···ऐसा करते हैं, इस कच्चे मांस के भस्म को सुरा में घोलकर बलराम के मुंह में डाल देते हैं। फिर उसकी पत्नी समेत सब कुछ

लूट लेते हैं।

कुंजल : पूरा मणि महल।

मोहिनी : नहीं।

[दौड़ती हुई बाहर निकल जाती है। उसे कोई रोक नहीं पाता।]

इंदूर : कहां सोये पड़े हैं?

कुंजल : बोलता क्यों नहीं?

कपी : अरे, क्या हो गया?

इंदूर : पकड़ लो।

[आजीव कुंजल और कपी की पकड़ में।]

इंदूर : अब बता।

आजीव : मुझे क्या पता था···।

इंदूर : था नहीं है।

[इंदूर का आजीव को मारना।]

तीसरा दृश्य

[रेवती का बलराम को ढूंढ़ते हुए आना। सामने मोहिनी का दिखना।]

मोहिनी : महाराज को ढूंढ़ रही हैं? महाराज यहीं कहीं जमीन पर सोये पड़े हैं।

रेवती : तुम्हें कैसे पता?···यहां क्या कर रही हो?

मोहिनी : मैं भी उन्हें ढूंढ़ रही हूं।

रेवती : क्यों?

मोहिनी : सब लोग कुछ ढूंढ़ ही रहे हैं···कोई दौड़ता हुआ, कोई भागता हुआ···कोई

रेवती : मुंह बन्द रखा करो।

मोहिनी : आपके साथ चलूं?

[साथ चलना।]

मोहिनी : आप भी डरती हैं? (चलना) आपको उन पर विश्वास नहीं?

[रुककर मोहिनी को देखना।]

मोहिनी : मैं बेहया हूं। मुझे कोई डर नहीं।

रेवती : निडर और स्त्री? और तुम?

मोहिनी : स्त्री क्या है?

रेवती : यह प्रश्न निरर्थक है ? प्रश्न करना है तो अपने आपसे पूछो—मैं कौन हूं ?

मोहिनी : मैं कौन हूं ? एक दिन यह प्रश्न किया था उत्तर मिला—यह हूं मैं। अपने आपको देखना शुरू किया। मेरी देह पर ये कपड़े। कपड़ों के नीचे मेरे अंग, शरीर। शरीर में एक अदृश्य लोक। मुझे चारों ओर से शोर सुनायी दिए—तुम इनसे बाहर नहीं निकल सकती। तुम्हारे भीतर तुम्हारा शिशु, तुम्हारी युवती, वृद्धा सब एक साथ रहेंगे। मैं भागी। यहां देखो—कहीं कोई भागकर निकल नहीं सकता। वही मेरे अंग। वही मेरी इन्द्रियां—वही मैं।

[चलना]

रेवती : सावधानी से चलना। देखना। चलना। कर्त्तव्य करना। इतना ही अपने वश में हैं।

[चलना। मोहिनी का लडखड़ाकर गिरना। रेवती का सम्हालना। साथ ले चलना]

मोहिनी : मां ! (रेवती को अंक में बांधना) मां !

[परस्पर देखना]

रेवती : सावधान ! कभी नहीं भूलना।

मोहिनी : (देखना)

रेवती : देखो। अनुभव करो।

[चलना]

रेवती : ओह ! वह सोये पड़े हैं।

[पास आना] यहां नींद आयी। मणि प्रासाद की पुष्पशय्या आग जैसी जलती है। (रुककर) या तो क्रोध होता है या उसी की

प्रतिक्रिया होती है। कितनी बार तुम सब को छोड़कर निकल पड़ते हो। पता नहीं क्या चाहते हो ? (देखना) यहां नींद आयी। क्या अब केवल कठोर तत्व ही प्रिय हैं। (इधर देखना) मोहिनी।···मोहिनी।

[पुष्प लेकर मोहिनी का आना।]

मोहिनी : मां ! तुम्हारे लिए पुष्प चुनने गयी थी। फूल-माला बनाना बहुत प्रिय है। अरे ! जूड़े में सूई-धागा ?

[फूलमाला बनाने लगना।]

मोहिनी : मैं फूल देती जाऊंगी···।

रेवती : कितने रंग-बिरंगे पुष्प चारों ओर खिलते हैं। एक सूई चाहिए एक धागा। जो इसे पिरोता चले···। अनुभवों का यह शांत संचय···। ऊर्जा का यह गत्यात्मक रूप।

[वही चारों युवकों का दिखना।]

रेवती : नहीं-नहीं, यहां नहीं। जग जाएंगे। मोहिनी, इन्हें मना करो।

[मोहिनी का रेवती के कान में कुछ कहना। इंदूर का क्रोध। मोहिनी को दबोचने का प्रयत्न।]

मोहिनी : जागो। जागो।

[बलराम का जागना। आजीव के अलावा तीनों युवकों का भागना।]

बलराम : यहां सो गया था ? बड़ी गहरी नींद आयी मुझे।

रेवती : एक था सूर्य। एक था सत्राजित। यह कथा मां के मुंह से सुनी है। सत्राजित सूर्य का भक्त था।

सूर्य ने उसे प्रसन्न होकर स्यमंतक मणि दे दी। उस मणि से प्रतिदिन आठ भार सोना बरसता था। श्री कृष्ण ने सत्राजित से कहा—इतनी अमूल्य संपत्ति तुम्हारे पास सुरक्षित नहीं रहेगी। मणि राजा उग्रसेन को दे दो। सत्राजित ने श्रीकृष्ण की बात नहीं मानी।

बलराम : फिर क्या हुआ ? मैं इस कथा में कहां हूं ?

रेवती : कथा में 'मैं' नहीं होता।

[बलराम के हाथ में फूलमाला देकर।]

रेवती : मनुष्य की केवल कहानी हो सकती है।

बलराम : और दुख देखना चाहती हो ?

रेवती : दुख अपने पात्र में है।

बलराम : तुम स्वयं के लिए मुझे सुखी देखना चाहती हो ?

रेवती : जो भी हो—यही राग है।

बलराम : यही मेरा अपमान करता है। यही क्रोध है। यही ··। इसके पार क्या है ? उसी तीर्थ-यात्रा पर निकला था।

रेवती : तीर्थ यात्रा का बहाना था।

बलराम : आरम्भ था।

रेवती : क्षोम से आरम्भ नहीं होता।

मोहिनी : मां ! क्या कहा ? क्षोभ से आरम्भ नहीं होता ?

बलराम : राग क्षोभ है !

रेवती : राग करुणा है।

बलराम : राग और विराग दोनों के लिए एक जैसी प्यास की तड़फन क्यों है मुझे ? इसका अनंत सागर और सागर का तूफान, इसे मैं तैरकर देखूंगा, ज्वार की तह में क्या है ?

रेवती : देख पाना मनुष्य के अधीन नहीं।

बलराम : देखूंगा। (आदेश) सुनो। सुनो।

[अंग रक्षक सहित परिचारिक पंचम, आनापान सबका दौड़ते हुए आना।]

बलराम : मैं आज रात यहीं एकांत में रहूंगा। जो मेरे इस एकांत में विघ्न डालेगा, वह अक्षम्य अपराधी होगा। वह कोई भी हो।

[जाने लगना]

रेवती : पहले अपने आप को देखें, आर्य !

बलराम : (जाते हुए) सब कुछ देखूंगा।

रेवती : हे कन्हायी ! हे घनश्याम। इनकी रक्षा करो। इनकी आंखों में काजल बनो। इनके माथे पर कस्तूरी तिलक दो। मुझे पुष्प में रूपांतरित कर अपने हाथों से इनके केशपाश में गूंथ दो। इन्हें अपने साथ लेकर वैसा कर दो, जैसे हम आये थे तुम्हारी आकांक्षा का ज्वार लेकर। काट दो यह निरा ऐन्द्रिय व्यापार। वही आकांक्षा फिर से भर दो, श्याम !

तीसरा अंक

[रात का समय। इधर उधर जलती हुई लकड़ियों से प्रकाश। बैठने का एक आसन, बिछावन, वस्त्रादि। पूर्णतः सुसज्जित बलराम का आना। पहले अपने आपको देखना। फिर विभिन्न तरह के दर्पणों में देखना। फिर चारो ओर देखते हुए एक स्थान पर।]

बलराम : पूर्णमासी की रात, सुरंग की दीवारों जैसा अंधेरा। यहां से पूरा आकाश दिखाई पड़ रहा है। महाभारत की लड़ाई की आवाज यहां क्यों आ रही है ? बाहर प्रकाश ? नैमिषारण्य तीर्थ ? नहीं वहां से बहुत दूर निकल आया हूं। (सहसा) इतने बड़े-बड़े चूहे ! (जंगली जानवरों के स्वर) एकांत का भय मुझे स्पर्श नहीं कर सकता। मैं निश्चिन्त हूं। (आसन पर बैठना) इच्छा हो रही है थोड़ा विश्राम कर लूं। नहीं।···सुना है, अमावस्या की रात चन्द्रमा सूर्य में समा जाता है। देखूं तो भला।

[देखना]

बलराम : कौन-कौन है उस आग के पीछे ? सावधान ! भागने की कोशिश ना करना ।···करणम !

[करणम का आना ।]

बलराम : तुम ?

करणम : भागने की कोशिश कर लो, महाराज !

बलराम : यहां आकर विघ्न डालने का मतलब जानते हो ?

करणम : इतने भयभीत क्यों हैं, महाराज !

बलराम : वाचाल ।

करणम : आज्ञा करो, महाराज ! सुरापान कराऊं ? सुंदरियां ले आऊं ? भोग में भी कैसी मर्यादा ? अपनों से क्या संकोच ? जो इच्छा हो पूरी करूं । ऐसा जीवन, ऐसा अवसर एक ही बार मिलता है । फिर क्या पता ना और हां के किस व्यर्थ के द्वन्द्व में पड़े हैं, महाराज ? मैं स्वयं ले आता हूं । आप की इच्छाओं से खूब परिचित हूं । आपका नमक खाया हूं ।

[जाने लगना]

बलराम : जानता है, मैं कौन हूं ?

करणम : कृष्ण के बड़े भाई । कहां वह, कहां आप ! वह रणछोड़ आप रणयोद्धा ।

बलराम : मेरी इतनी चापलूसी ?

करणम : जो आपको प्रिय है ।

बलराम : मेरे प्रिय को तू जानता है ?

करणम : आपके प्रियतम को भी । आपका नमक खाया है, महाराज !

बलराम : मेरे चारों ओर यह मकड़ा जाला बुन रहा है ।

ये आवाजें कहां से आ रही हैं ? महाभारत का युद्ध रात में नहीं होता । योद्धा अपने शिविरों में विश्राम करते हैं । यह तेज गंध कहां से आ रही है ?

करणम : वही ले आता हूं महाराज ।

बलराम : पहले अपना चेहरा देख । कभी देखा है ?(करणम का आइना में देखना) दरिद्र भुखमरा ? वह मेरी इच्छायें पूरी करेगा ? मेरे प्रियतम को जानता है ? चला जा यहां से । दया आती है तेरे पीले मुख पर । जा भाग जा ।

करणम : नहीं । अब बिल्कुल नहीं ।

बलराम : क्या ? तू यहां से नहीं भागेगा ?

करणम : भागकर यहां पहुंचा हूं ।

बलराम : चला जा ।

करणम : चलना मन से आरम्भ होता है, दुख पीछा करता है (दर्पन देखना) जैसे घोड़े के पैर के पीछे रथ का पहिया । जैसे कि छाया पीछा करती है ।

बलराम : दर्पन रखता है या नहीं ?

करणम : इतनी इन्द्रियां । सबकी इतनी इच्छायें ।

बलराम : बकवास बंद ।

करणम : इतना कांप क्यों रहे हैं ? ···ओह इतना काम-ज्वर ! बर्फ की टोपी पहन लीजिए ।

बलराम : तेरी यह हिम्मत !

[प्रहार करने का प्रयत्न ।]

करणम : आखिर चाहते क्या हैं ? नहीं पता ? सब कुछ चाहते हैं ? कुछ भी पाना असम्भव है, जो दूसरे पर निर्भर है ।

बलराम : करणम !

करणम : दर्पन पर कितनी धूल !

बलराम : अब आगे बढ़ा तो···

करणम : कितनी मैल जमी है !

बलराम : बस ! बस !!

करणम : इसमें कोई क्या देख सकता है ?

बलराम : दुष्ट ! नराधम ।

[प्रहार करना । करणम की मृत्यु ।]

बलराम : मर गया ? इतने हल्के प्रहार से ? नहीं, अचेत हो गया है । सांस नहीं । भागने के लिए डराना चाहा था । इसे कोई डर नहीं ? भागा क्यों नहीं ? आत्मरक्षा में कोई संघर्ष नहीं ? आह, इतना दयनीय चेहरा ! (उस पर वस्त्र फेंकना) वस्त्र के भीतर से झांक रहा है । यहां से···यहां भी दिख रहा है ।

[दर्पन की चमक । पशुओं के स्वर । हवा की गति । लाश को खींचकर एक ओर करना । उसे छिपाने के लिए उस पर आसन रखना । उस पर बिछावन । वस्त्रों से ढकना-छिपाना ।]

बलराम : वन-बिलाव जैसे इतने बड़े-बड़े काले चूहे अभी कुतर कर खा जायेंगे । भूखे वन पशु अभी चट कर लेंगे । बस, यहां से हट जाऊं ।

[जाने लगना । करणम का प्रकट होना ।]

करणम : इस तरह छोड़कर भाग निकलोगे ? जैसे महाभारत का युद्ध हूं ? नेमिषारण्य का वह कथावाचक सूत हूं ? जिसकी हत्या कर बिना किसी प्रायश्चित के यहां विहार करने चले आये ? सुनो,

सारी मृत्यु हत्यायें हैं । हत्या पाप है । पाप और पुण्य दोनों का पीछा करता हूं । जीवन से पलायन करने का यह अंतिम प्रयत्न था । इस हत्या के बाद तुम संसार के सबसे बड़े आजाद अभिनेता होते ? यही योजना थी ? कथा की हत्या कर कहानी गढ़ना चाहते थे ? अब क्यों नहीं पूछते मैं कौन हूं । इस दुनिया को इन्द्रियों से देखने चले थे । इस दर्पन से ? वह भीतर का दर्पन कहां गया ? गुस्से में उस पर भी प्रहार कर दिया ? अब देखो मुझे । छुओ मेरा हाथ ।

बलराम : नहीं ।

करणम : भागने को त्यागना समझा ?

बलराम : नहीं ?

करणम : एक राज्य के लिए लड़ते हुए अपनों को तुच्छ मानकर छोड़ा, दूसरे राज्य में विहार करने आये, आधा त्याग, आधा भोग । आधा सच । आधा झूठ । एक प्रिय दूसरा अप्रिय ।

बलराम : अब क्या करूं ?

करणम : कुछ नहीं कर सकते । दूसरे के बल पर बलराम बने हैं । देखो—अकेले क्या हो, कृष्ण के बिना ? जिसको पकड़ना असम्भव है, उसे पकड़ने चले, उसको छोड़ जिसे छोड़ना पाना असम्भव है ।

बलराम : मैं तुझे···।

करणम : अब कुछ नहीं कर सकते । कुछ भी कहीं करने से पहले ही देखना था—क्या कर रहा हूं । एकांत में निजी काम को सब के सामने नंगा कर···। क्या देखना चाह रहे थे इन शीशों से ? खुद

एक आईना बनाकर उसी में देखने की झूठी कोशिश।

बलराम : अभी तुझे उठाकर···।

करणम : जब तक तुम हो, कुछ नहीं कर सकते। कुछ नहीं हो सकते। देखो, तुम क्या हो ? नीचे से देखो—नरक, भूख पशु, क्रोध—इसके ऊपर है वह क्षेत्र—जिसके भ्रम में चले थे तीर्थयात्रा करने, इन नदियों को पार किए बिना सूतपुत्र के कथा सूत्र को काटकर पशुओं की तरह आजाद होने चले थे।

बलराम : करणम !

करणम : यह नाम मत लो। वह अब गवाह है। चरित्र का सबूत, पात्र। सोचा था कहीं कोई देखने वाला नहीं है। सब कुछ उसी का रूप है। तभी तो सब कुछ रूपक है। देखो, गीता-ज्ञान से तुम्हारा भ्रम क्यों नहीं कटा ? अर्जुन ही क्यों ? सुनो, सुनो यह स्वर—मैं किसी घायल से यह नहीं पूछता कि तुम्हारा घाव कैसा है, मैं वही घायल हो जाता हूं।

करणम : तुम्हारी आंखों में आंसू ?

[मौन। पृष्ठभूमि में वन पशुओं के स्वर। हवा का बहना।]

करणम : रोओ नहीं। मनुष्य जैसा निर्बल यहां और कोई नहीं। बिना कहे जाता। बिना पूछे जाता।

बलराम : (एकटक करणम को देखना।)

करणम : अमावस्या की रात में चन्द्रमा सूर्य में समा जाता है, यही देखना चाह रहे थे ?—जैसे चन्द्रमा

मरकर अमृतकला को प्राप्त करता है, वैसे ही जीवन को पूरी तरह से खाली किए बिना देखना असम्भव है।

बलराम : सुनो।

करणम : मौन हो जाओ। पात्र खाली करके भरने की प्रक्रिया शुरू करो। जीवन को आनुष्ठानिक मृत्यु के रूप में साधो। दूसरों के आस्वादन के लिए जलो। मरो। रस निचोड़ो। मारो।

[जाने लगना]

बलराम : रुको। सुनो।

करणम : सुबह होने से पहले मुझे अपने निश्चित स्थान पर पहुंच जाना है।

बलराम : वह निश्चयकर्ता कौन है ?

करणम : वही, जिसके साथ जब तक थे तुम, तब तक योगी थे। जब उससे दूर हुए तो देखो—क्या हो ?

बलराम : ऐसा क्यों हुआ ?

करणम : 'क्यों' के उत्तरदायी तुम हो। वह 'क्यों' नहीं, वह 'है'।

[चलने लगना]

बलराम : मुझे भी अपने संग ले चलो।

करणम : देना, संपूर्ण रूप से अपने आप को देना है।

बलराम : लो, देता हूं—लो मुझे।

करणम : देना, तब तक संभव नहीं जब तक वस्तु में, आकार में, दृश्य में, स्वाद, स्पर्श, गंध, श्रवण में विश्वास है।

[जाने लगना]

बलराम : मैं संग चलूंगा।

करणम : यह चलना इससे भागने का प्रयत्न होगा।

[बलराम का एकटक करणम को देखना।)

करणम : चलना वहीं से है, जहां इस यात्रा का आरम्भ है।

[करणम का जाना। बलराम का चुपचाप देखते रहना। प्रातःकाल होना। बलराम का करणम के शव पर से सारे आवरण हटाना। इस बीच चारों युवकों का आकर देखना।]

आजीव : करणम।

कपी : यह मर गया ?

कुंजल : यह हत्या किसने की ?

बलराम : मैंने···बलराम ने।

इंदूर : तुमने ? क्यों ?

बलराम : दूर हटो। देखते नहीं, मेरे शरीर से दुर्गन्ध आ रही है।

आजीव : नहीं तो।

कपी : हां, आ रही है।

कुंजल : तुम्हें आ रही है ?

इंदूर : दौड़ो। राजा रैवत को सूचना दो।

[कुंजल का दौड़ना।]

चौथा अंक

पहला दृश्य

[समयः दोपहर दिन का समय।]

आजीव : अपनी समझ में तो कुछ नहीं आता।

कपी : राजकाज प्रजा की समझ में आने लगे तो हो गया बंटाधार।

आजीव : राजा के सिपाही इंदूर को पकड़कर क्यों ले गए? जब हत्या और हत्यारे के बारे में कोई शंका ही नहीं, तो चारों ओर गुप्तचर क्यों लगे हैं?

कपी : जहां कोई शंका नहीं होती, वहां एक लघुशंका होती है। अभी आया।

[जाना]

आजीव : कुंजल राज-दरबार में क्या गया, वहीं रह गया। सुना है, राज-दरबार में राजपत्रित कर्मचारी हो गया। इतनी बड़ी नौकरी!

कपी : (आना) अरे जितनी बड़ी गुलामी, उतनी बड़ी नौकरी।

आजीव : बलराम आ रहे हैं।

कपी : पीछे-पीछे रेवती। बोल। बोल'''हत्यारे के तन

से दुर्गन्ध आ रही है। हत्यारे के तन से दुर्गन्ध आ रही है। हटो, भागो···दुर्गन्ध से बचो।

आजीव : नहीं, कोई दुर्गन्ध नहीं।

कपी : जो कहा गया है—कहना ही होगा।

आजीव : नहीं कहूंगा।

कपी : नहीं ?

आजीव : नहीं।

[कपी आजीव पर प्रहार करता है। आजीव बचकर भागता है। कपि का पीछा करना। बलराम के पीछे रेवती का आना।]

बलराम : दूर रहो दुर्गन्ध से।

रेवती : नहीं, ऐसा नहीं है।

बलराम : मुझे आ रही है दुर्गन्ध।

रेवती : ऐसा दण्ड मत दो।

बलराम : मनुष्य जैसी निर्बल और कोई नहीं। दूसरों से शक्ति लेकर अपनी सत्ता का झूठा अहंकार।

रेवती : इतने दयनीय न हो।

बलराम : यही सच्चाई है।

रेवती : आपको अन्याय सदा असह्य रहा है।

बलराम : वह शक्ति उन्हीं के पास है, जिनके साथ रहकर मैंने कितने संहार किए। कितने वध, कितनी हत्यायें, तब मुझे कोई पाप अपराध बोध नहीं। त्वष्टा का पुत्र विश्वरूप, देवताओं का पुरोहित इन्द्र ने उसकी हत्या की। इन्द्र को ब्रह्महत्या नहीं लगी। कृष्ण ! तुमने तीनों लोकों के असंख्य दुष्टों को मारा। (सहसा) ओह ! मैं अपनी तुलना तुम से कर रहा हूं ? (पृष्ठभूमि से स्वर 'दुर्गन्ध

आ रही है। दूर हटो।')

[दोनों का जाना। आनापान, सांडव, पंचम का आना।]

पंचम : करणम बेचारा···ब च···चा। मुझे उसका मुंह नहीं भूलता।

आनापान : कैसे टुकुर-टुकुर ताकता था।

सांडव : जो भी हो, जिद्दी था। भीतर से घोंटा हुआ था। यहां आते ही जब महाराज ने कह दिया कि चला जा यहां से, तब क्यों छिपा रहा ?

पंचम : रथ के पीछे-पीछे दौड़ा आया था। महाराज जी का असली भक्त था।

आनापान : प्रेम था, प्रेम।

सांडव : प्रेम नहीं लड्डू था। अब देखो कितनी झंझटें फेल गयीं। (सहसा) गोपी। अरे ओ गोपी ! यह लो, बांसुरी बजा रहा है।

[गोपी का आना]

पंचम : बेचारा तुम्हारे घर रहता था।

आनापान : उसके मरने का कोई दुख नहीं ?

सांडव : वह आदमी ठीक नहीं था ना ?

पंचम : चुप रह। ऐसा गऊ मनई हमने नहीं देखा। हाथ मारता था। मुझे ही मारता था—पता नहीं काहें।

आनापान : अरे बोलो गोपी।

गोपी : देखो भाई, ई है बांसुरी। ई छेद में फूंको तो भैरव या में भैरवी। इहां फूकों तो बसंत। यहां मालकौस···इहां···।

सांडव : बस-बस-बस कहां की बात कहां ले गया।

गोपी : अरे सब बांसुरी हैं। करणम से खूब गप्प होती थी। कहता था—जहां मिलन सम्भव है, वह प्रेम नहीं, सम्बन्ध है। प्रेम तो भइया असंभव के लिए होता है।

आनापान : बीच में कुछ नहीं ?

सांडव : तू भी किस के मुंह लग गयी।

आनापान : गोपी, महाराज की दशा देखी है ? कैसे मौन हो गए हैं।

गोपी : अरे ! गौएं पूंछ उठाइ के कहां भाग रही हैं। आ···आ···धोरी। धोरी···गौरी।

[जाना, पृष्ठभूमि से संगीत।]

सांडव : राजा रैवत की सवारी आ रही है।

आनापान : साथ में महाराज हैं।

[सब का जाना। राजा रैवत के साथ बलराम का आना।]

राजा : सारी चिन्ता मुझ पर छोड़ दीजिए। आप अब मेरे साथ राजमहल में रहेंगे।

बलराम : यह निर्णय आपने कैसे ले लिया ?

राजा : वहां किसी तरह का कष्ट नहीं होगा। राज घोषणा हो जाएगी।—महाराज बलराम तीर्थ-यात्रा पर गए हैं।

बलराम : क्या ?

राजा : क्या प्रमाण है, आपने करणम की हत्या की ?

बलराम : सत्य को कोई प्रमाण नहीं चाहिए।

राजा : स्वयं क्यों कहते हैं—'मेरे शरीर से दुर्गन्ध उठ रही है।' यह क्यों कहते हैं ?

बलराम : अपनी स्वाधीनता के लिए।

राजा : क्या आप पराधीन हैं ? इससे मेरा कितना-अपयश होगा। आप क्यों स्वीकार करते हैं···?

बलराम : यहां के वृक्ष क्यों काटे गए ?

राजा : [चुप]

बलराम : जिन वृक्षों के नीचे हम बैठते थे, गौएं दूहाती थीं, वृक्ष फूलते-फलते थे, वे क्यों काटे गए ?

राजा : करणम की हत्या और वृक्षों का कटना—दोनों में कोई सिर पैर नहीं।

बलराम : भागना···काटना···मारना सब एक है।

राजा : आर्य ! आपका चित्त अशांत है। यहां से चलकर राज भवन में विश्राम कीजिए।

बलराम : यह सब राज्य है। एक राज्य से दूसरे राज्य में शरण—मुझ जैसा नीच और कौन होगा !

राजा : चित्त को और दुख मत दीजिए।

बलराम : दुख से भागकर आया था—सुख के लिए ! (हंसना) वाह !

राजा : आइए, मेरे साथ।

बलराम : यहां से कहीं नहीं जाना।

राजा : आर्य ! यह क्या हो गया आपको ?

बलराम : हां, क्या हो गया ? चला था, फिर कहां पहुंच गया ? वहां से यहां तक जो कुछ हुआ, जो कुछ हो रहा है, मैं हूं उत्तरदायी।

राजा : आप मेरे दामाद हैं। मेरे राज्य में अतिथि हैं। सारा दायित्व मेरा है।

बलराम : असम्भव।

[बलराम का जाना। राजा का संकेत पाकर रक्षक का आना।]

रक्षक : आज्ञा, महाराज !

राजा : बलराम की सुरक्षा पर अत्यधिक बल दिया जाय। इन्हें इतना अधिक महत्त्व दिया जाय कि लोक में आतंक फैल जाय—यह कितने असाधारण हैं। कितनी अपार शक्ति है इनके पास। समय आने पर इसका इस्तेमाल होगा।

रक्षक : पर वह दुर्गन्ध की बात ?

राजा : उसका प्रबंध हो गया।

रक्षक : जय हो महाराज की !

दूसरा दृश्य

(समय : दोपहर। पृष्ठभूमि में शोर उठना। कुंजल और कपी द्वारा इंदूर को बांधे ले आना। दूसरी ओर से अंगरक्षक का आना।)

रक्षक : महाराज बलराम की जय। करणम का असली हत्यारा पकड़ा गया।

[लोगों का आकर देखना।]

आजोव : इंदूर ? यह कैसे ?

[मोहिनी का आना।]

मोहिनी : नहीं। इंदूर ?

कुंजल : इंदूर नहीं, करणम का हत्यारा।

[सब का परस्पर देखते रह जाना।]

मोहिनी : इंदूर।

रक्षक : दूर रहो। क्या भीड़ लगा रखी है ? चलो। हटो यहां से। देखते नहीं, हत्यारे के शरीर से दुर्गन्ध उठ रही है।

मोहिनी : इंदूर। क्या हो गया ? बोलता क्यों नहीं ?

कपी : अपराध कबूल कर लिया है।

मोहिनी : कहां गये सब लोग ? मां !

[पुकारती हुई चली जाना।]

रक्षक : ऐ ! दूर हटो। यहां चुपचाप खड़े रहो। (आजीव चुप) चुप्प। ढीला मत करो। राज्य की सारी जिम्मेदारी है।

कुंजल : हम राजकर्मचारी हैं।

रक्षक : उतना ही बोलना है, जितना कहा गया है।

कपी : मुझे याद है।

रक्षक : तुम लोगों का गाजा बाजा कहां गया ? नाचना गाना · गुस्सा ?

कुंजल : अब हम राजपत्रित कर्मचारी हैं।

कपी : कर्मचारी नहीं, अधिकारी।

रक्षक : सावधान ! आ रहे हैं।

[बलराम के साथ मोहिनी का आना।]

मोहिनी : यह देखो—करणम का हत्यारा।

[बलराम का चुपचाप देखते रह जाना।]

मोहिनी : यह बोलता क्यों नहीं ? इसकी जीभ काट दी गयी ?

आजीव : वहां पहुंचकर बोलने की जरूरत नहीं होती।

रक्षक : चुप रहने को कहा था।

[सन्नाटा]

बलराम : समझाओ। क्या तुम्हारी भी बात नहीं मानेगा।

मोहिनी : एक जवान आदमी था। किसी प्रेत ने उसे सूअर के रूप में बदल दिया। सारे लोग परेशान। एक साधू आया। बोला—इसे फिर मनुष्य बनाया जा सकता है। कोई कुंआरी पवित्र युवती कोई

मंत्र पढ़कर इसे छू दे। न मैं कुआरी, न पवित्र—कोई मंत्र भी नहीं जानती। जिन कारणों से मैं ऐसी हूं, उन्हीं से यह ऐसा हुआ।

[बलराम उसे सम्हाल लेते हैं।]

तीसरा दृश्य

[समय : संध्या। मोहिनी अकेली बैठी है। रेवती, परिचारिका, परिचारक के साथ बलराम का आना।]

रेवती : यहां एकांत में छिपी बैठी है। शून्य के आरपार देख रही है। मेरी बेटी के तन-बदन को किसने नंगा किया ? वस्त्राभूषण पहनाओ।

[मोहिनी को वस्त्राभूषण पहनाया जाना।]

मोहिनी : नहीं, मुझे मत छुओ। मैं अभिशप्त हूं। कोई अभी मिलेगा फिर कल्प-कल्पांतर के लिए बिछड़ जाएगा। दूर रहो।

रेवती : बेटी !

मोहिनी : मैं किसी की कुछ नहीं।

रेवती : मोहिनी !

मोहिनी : मुझे इन वस्त्राभूषणों से क्यों सजाना चाहते हैं ? उसके लिए हैं जिसने राज्य दरबार में आत्मा बेच दी—इन्हीं वस्त्राभूषणों के लिए।

रेवती : मैंने अपने हाथों से बनाए हैं—तुम्हारे लिए।

मोहिनी : मेरे लिए ? मैं कौन हूं, मां ?

रेवती : यह उत्तर स्वयं पाना है।

[मोहिनी को वस्त्राभूषण पहनाया जाना।]

मोहिनी : कौन हूं मैं ? एक-एककर किसने उतारे मेरे वस्त्राभूषण ? किसने ? कैसे ? क्यों ?

बलराम : सुनो। स्यमंतक मणि कथा। अब मत सो जाना। हम विकास की कहानी नहीं। हम हैं सृष्टि कथा। मणि सत्य है, तर्क नहीं। सूर्य होता नहीं, सूर्य है। होने के बंधन से भागा था। बलराम और कृष्ण, कौरव और पांडव—लड़ना-भागना, हां, नहीं—दो में बांट कर देखा।

[राजसी वस्त्रों में इंदूर के साथ कुंजल और कपी का आना।]

कुंजल : यह रही महाराज आपकी मोहिनी।

इंदूर : इसे वस्त्राभूषण किसने पहनाए ?

रेवती : हमने।

इंदूर : मैं रैवत राज्य का उपराज्यपाल हूं। राजा रैवत, अपनी बेटी दामाद से मिलने के लिए मणि-महल में प्रतीक्षा कर रहे हैं।

रेवती : जाओ, अपने राजा से कहो—हम नहीं मिलना चाहते।

इंदूर : राजा की आज्ञा है।

रेवती : यह हमारा निर्णय है।

इंदूर : मोहिनी मेरी है।

मोहिनी : तेरे चरित्र से मोहिनी को घृणा है। चला जा। आंखों के सामने से दूर हो।

इंदूर : घृणा है। तब तो गंध है। पकड़ लो। खींच ले चलो।

[तीनों का बढ़ना।]

रेवती : आर्य ! उठाओ हलायुध। संहार करो इन पशुओं का।

[बलराम से हलायुध नहीं उठता। उन्हें देखकर गिर पड़ना। मोहिनी का भागना। उन तीनों का पीछा करना।]

बलराम : प्रनतपाल ! शरणविहारी ! तुम्हारे दिए हुए का यह अभिमान ? जो बिना दर्पन के अपना मुंह तक नहीं देख सकता, उसे इतना अहंकार। क्षमा करो करुणानिधान। तुम इतने पास थे कि देख नहीं पाया। अपने प्रकाश से भी बाहर इतने काले क्यों हो, मेरे अज्ञान का यह पाप शरीर गोधूलि की गेरुई उदासी तुम्ही हो श्याम ! यह तुम्हीं हो सान्ध्यानी आख्यान, संध्या ध्यान वेला इन्द्र-धनुष की तनी हुई प्रत्यंचा। हिरण्यगर्भ ···।

[गोपी मोरपंखी लिये आता है। हाथों में थमाता है। पंचम बहंगी लिये आता है। बलराम का पंचम के कंधे से बहंगी उतारकर जमीन पर रखना। संगीत। यात्रा प्रारम्भ होती है। सांडव आनापान देखते रह जाते हैं।]

पांचवां अंक

पहला दृश्य

[समय : प्रातःकाल। दृश्य में मोहिनी को घेरे हुए इंदूर, कुंजल और कपी। आजीव के दोनों हाथ उसकी पीठ पर बंधे हैं—गिरा पड़ा है।]

आजीव : नहीं, नहीं, नहीं।

इंदूर : मैं नहीं जानता मेरा भी कोई स्वामी है। कौन है, जो मेरे वशीभूत नहीं ?

मोहिनी : एक हाथ में अग्नि दूसरे में जल। यहां काम। यहां अग्नि। यहां यम।

कुंजल : क्या बड़बड़ा रही है ?

कपी : कितनी मादक गन्ध है।

मोहिनी : हे मां ! तुम्हारी गन्ध, तुम्हारे अंश इस पुष्कर में समा जाय, जिसे देवताओं ने तुम्हें उषा के सूर्य से विवाह के अवसर पर नेग के रूप में दिया था।

कुंजल : इसका माथा चकरा गया है।

इंदूर : इसके वस्त्राभूषण उतार दो।

मोहिनी : मेरा रोम-रोम हर्षित है। वही वस्त्राभूषण है। अब कोई अनावरण नहीं कर सकता। मेरे अंग-

प्रत्यंग पर कमल खिले हैं। मुझे अब कोई छू नहीं सकता।

इंदूर : यह देख मेरे हाथ। एक यह। एक यह।

[मोहिनी को पकड़ना]

इंदूर : जो चाहता हूं, ले लेता हूं।

आजीव : कायर। मृत्युमुखी ।

इंदूर : पहले मुझमें दुविधा थी, फिर संकोच। सब एक झटके में तोड़ दिया। राजा से सत्ता हथियाने की योजना सिद्ध हुई। सब कुछ हड़प कर स्वामी बनूंगा। प्रकृति मेरी रखैल होगी। अभी तक जो पुराण था, वह खत्म होगा। मनुष्य का इतिहास प्रारम्भ होगा।

[आजीव के उठने, भागने का प्रयत्न। कुंजल, कपी उसे दबोचलेते हैं। मोहिनी निकलने लगती है। दोनों इधर दौड़ते हैं। आजीव निकल जाता है।]

कुंजल : भागकर जायेगा कहां ?

इंदूर : ऐसी राज्य व्यवस्था करूंगा, जहां मुझ से बड़ा और कुछ नहीं होगा।

कुंजल : कहां से यह दुर्गन्ध आ रही है ?

[वस्त्र को सूंघना।]

कपी : जैसे कुछ जल रहा है।

मोहिनी : चिता जल रही है। चिता में जल रहे हो।

इंदूर : दुर्गन्ध ही ऊर्जा का स्रोत है। जितनी दुर्गन्ध, उतनी शक्ति। ऊर्जा में जब आग लगती है, वस्तु में गुणात्मक परिवर्तन हो जाता है।

[घेरे में भागती हुई मोहिनी को देखना।]

इंदूर : मोहिनी से हिरनी हो गयी। मृगी बन गयी। (हंसना) अब आखेट। केवल आखेट। मैं बहेलिया। तू बध्य मृगी। लूटकर पाने में ही उत्तेजना है।

कुंजल : दबोचने में ही रस है।

कपी : कितनी मादक !

कुंजल : हाय !

इंदूर : कौन मेरे अधीन नहीं। मोहिनी।

मोहिनी : मैं···मैं नहीं।

[मोहिनी का भाग जाना।]

कुंजल : नहीं, अभी और। (संगीत) अभी और।

कपी : और अभी।

इंदूर : और···। (संगीत) और।

[संगीत। भ्रम (अभिनय) में लिप्त।]

दूसरा दृश्य

[संगीत। यात्रा-दृश्य—बलराम, रेवती गोपी, पंचम।]

आत्मानं अखिलात्मनाम्।
झन्न झनन झन्न॥
तं नमामि हरिं परम्।
झन्न झनन झन्न॥
वन्दे विचित्रार्थं पदम्।
झन्न झनन झन्न॥

[यात्रा। दौड़ते हुए आजीव का आना। गोपी के हाथ से मोरपंख ले यात्रा में चलना।]

बलराम : देखो ब्रह्म हत्यारे को।
देखो यह आत्म-हनन।
लोग : आत्मानम् अखिलात्मनाम्।
बलराम : देखो दुर्गन्ध तन।
लोग : तं नमामि हरिं परम्।
बलराम : देखो यह तन दहन।
लोग : वन्दे विचित्रार्थं पदम्।
बलराम : कृष्णन। वृन्दावन॥

लोग : वन्दे विचित्रार्थं पद्म।

[यात्रा गतिमान है दूर वही युवक दिखते हैं।]

गोपी : देखो। कृष्णसार मृग।
रेवती : मृग अपनी कस्तूरी गन्ध से उन्मद हैं।
आजीव : ये क्या ढूंढ़ रहे हैं?
गोपी : जिस गन्ध को बाहर ढूंढ़ रहे हैं, वही इनका वध है।

[यात्रा]

लोग : वन्दे विचित्रार्थं पद्म।
बलराम : यह कैसा दृश्य? चांदनी रात में बलुही भूमि का रसहीन विस्तार।
रेवती : गोपी बजाओ बांसुरी।
गोपी : बांसुरी? अरे, यही कहीं गुम हो गयी। (ढूंढ़ना) अरे रे रे रे रुको। देखो ई निसान। नटवर कन्हैया के पांव के निसान।

[बलराम का माथा देना।]

बलराम : तुम्हें प्रत्यक्ष देखने-जानने का अहंकार। तुम कहां-कहां किस-किस पथ पर? किसके पीछे? किसके आगे?

[माथा टेकना। सब का बैठना।]

रेवती : जिसने हमें इतनी आसक्ति दी, वह स्वयं अनासक्त कैसे हो सकता है?
आजीव : वह कैसी आग?
गोपी : चिता जल रही है।

[आग]

बलराम : वह अग्नि।

[देखना]

गोपी : वह अग्नि ?

बलराम : इधर भी, उधर भी। चरण-चिह्न दोनों ओर।

लोग : दोनों ओर।

बलराम : विश्राम करते हैं।

[सब विश्राम करने को होते हैं, दौड़ती गिरती हुई मोहिनी का आना।]

मोहिनी : गोपी। बांसुरी।

[रेवती उसे अंक में भर लेती है। गोपी बांसुरी को देखता है।]

रेवती : कितनी प्यासी है। गोपी, बांसुरी, बजाओ। बेसुध हो गयी।

गोपी : बांसुरी में रेत ही रेत।

[सब का विश्राम। गहरी निद्रा। दोनों ओर अग्नि-प्रकाश। युवकों का चिता-आग की ओर जाने का दृश्य। करणम का प्रकट होना। बलराम को जगाना।]

करणम : यहां आकर सो गए ?

बलराम : आगे कल चलेंगे।

करणम : तुम मेरे साथ चलना चाह रहे थे। चलो, मेरे साथ।

बलराम : तब अपने साथ क्यों नहीं ले गए ?

करणम : अब चलो।

बलराम : सोचता हूं···।

करणम : अब तक क्या करते रहे ?

बलराम : सुनो ऐसा है कि···

करणम : कोई बहाना नहीं। चलो। चलना ही है।

बलराम : कहां ? किधर ?

करणम : वहां। उधर।

बलराम : अग्नि।

करणम : आत्मयज्ञ।

बलराम : इतना ताप। इतना दहन।

करणम : इतनी शीतल अग्नि।

[करणम का खींचना। बलराम द्वारा किंचित संघर्ष।]

करणम : यात्रा में कोई विश्राम नहीं।

बलराम : रुको।

करणम : अब तक रुके ही थे।

बलराम : इन्हें ?

करणम : सब छोड़कर जाना है।

बलराम : सुनो।

करणम : चलो !

[संघर्ष। करणम बलराम को खींचते हुए ले जाता है। पूरे दृश्य पर अग्नि का फैल जाना।]

□□

बलराम की [illegible]

[illegible]

भारती [illegible]